

लाला झाउलाल तिलमिला उठे। उन्होंने रोब के साथ कहा—अजी हटो, ढाई सौ रुपये के लिए भाई से भीख माँगोगी, मुझसे ले लेना।

“लेकिन मुझे इसी जिंदगी में चाहिए।

“अजी इसी सप्ताह में ले लेना।

“सप्ताह से आपका तात्पर्य सात दिन से है या सात वर्ष से?” लाला झाउलाल ने रोब के साथ खड़े होते हुए कहा—“आज से सातवें दिन मुझसे ढाई सौ रुपये ले लेना।”

लेकिन जब चार दिन ज्यों—त्यों में यों ही बीत गए और रुपयों का कोई प्रबंध न हो सका तब उन्हें चिंता होने लगी। प्रश्न अपनी प्रतिष्ठा का था, अपने ही घर में अपनी साख का था। देने का पक्का वादा करके अगर अब दे न सके तो अपने मन में वह क्या सोचेगी? उसकी नज़रों में उसका क्या मूल्य रह जाएगा? अपनी वाहवाही की सैकड़ों गाथाएँ सुना चुके थे। अब जो एक काम पड़ा तो चारों खाने चित हो रहे। यह पहली बार उसने मुँह खोलकर कुछ रुपयों का सवाल किया था। इस समय अगर दुम दबाकर निकल भागते हैं तो फिर उसे क्या मुँह दिखलाएँगे?

खैर, एक दिन और बीता। पाँचवें दिन घबराकर उन्होंने पं. बिलवासी मिश्र को अपनी विपदा सुनाई। संयोग कुछ ऐसा बिगड़ा था कि बिलवासी जी भी उस समय बिलकुल खुक्ख थे। उन्होंने कहा—मेरे पास हैं तो नहीं पर मैं कहीं से माँग—जाँचकर लाने की कोशिश करूँगा और अगर मिल गया तो कल शाम को तुमसे मकान पर मिलूँगा।

वही शाम आज थी। हफ्ते का अंतिम दिन। कल ढाई सौ रुपये या तो गिन देना है या सारी हेंकड़ी से हाथ धोना है। यह सच है कि कल रुपया न आने पर उनकी स्त्री उन्हें डामलपफासी न कर देगी केवल ज़रा—सा हँस देगी। पर वह कैसी हँसी होगी, कल्पना मात्रा से झाउलाल में मरोड़ पैदा हो जाती थी।

आज शाम को पं. बिलवासी मिश्र को आना था। यदि न आए तो? या कहीं रुपये का



हुई। उन्होंने नौकर को आवाज़ दी। नौकर नहीं था, खुद उनकी पत्नी पानी लेकर आई।

वह पानी तो ज़रूर लाई पर गिलास लाना भूल गई थीं। केवल लोटे में पानी लिए वह प्रकट हुई। फिर लोटा भी संयोग से वह जो अपनी बेढंगी सूरत के कारण लाला झाउलाल को सदा से नापसंद था। था तो नया, साल दो साल का ही बना पर कुछ ऐसी गढ़न उस लोटे की थी कि उसका बाप डमरू, माँ चिलम रही हो।

लाला ने लोटा ले लिया, बोले कुछ नहीं, अपनी पत्नी का अदब मानते थे। मानना ही चाहिए। इसी को सभ्यता कहते हैं। जो पति अपनी पत्नी का न हुआ, वह पति कैसा? फिर उन्होंने यह भी सोचा कि लोटे में पानी दे, तब भी गनीमत है, अभी अगर चूँ कर देता हूँ तो बालटी में भोजन मिलेगा। तब क्या करना बाकी रह जाएगा?

लाला अपना गुस्सा पीकर पानी पीने लगे। उस समय वे छत की मुँडेर के पास ही खड़े थे। जिन बुजुर्गों ने पानी पीने के संबंध में यह नियम बनाए थे कि खड़े—खड़े पानी न पियो, सोते समय पानी न पियो, दौड़ने के बाद पानी न पियो, उन्होंने पता नहीं कभी यह भी नियम बनाया या नहीं कि छत की मुँडेर के पास खड़े होकर पानी न पियो। जान पड़ता है कि इस महत्वपूर्ण विषय पर उन लोगों ने कुछ नहीं कहा है।

लाला झाउलाल मुश्किल से दो—एक घूँट पी पाए होंगे कि न जाने कैसे उनका हाथ हिल उठा और लोटा छूट गया।

लोटे ने दाएँ देखा न बाएँ, वह नीचे गली की ओर चल पड़ा। अपने वेग में उल्का को लजाता हुआ वह आँखों से ओझल हो गया। किसी ज़माने में न्यूटन नाम के किसी खुराफाती ने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति नाम की एक चीश ईजाद की थी। कहना न होगा कि यह सारी शक्ति इस समय लोटे के पक्ष में थी।

लाला को काटो तो बदन में खून नहीं। ऐसी चलती हुई गली में।!चे तिमंजले से भरे हुए लोटे का गिरना हँसी—खेल नहीं। यह लोटा न जाने किस अनामिकारी के झाँपड़े पर काशीवास का संदेश लेकर पहुँचेगा। कुछ हुआ भी ऐसा ही। गली में ज़ोर का हल्ला उठा। लाला झाउलाल जब तब दौड़कर नीचे उतरे तब तक एक भारी भीड़ उनके आँगन में घुस आई।

लाला झाउलाल ने देखा कि इस भीड़ में प्रधान पात्र एक अंग्रेज़ है जो नखशिख से भीगा हुआ है और जो अपने एक पैर को हाथ से सहलाता हुआ दूसरे पैर पर नाच रहा है। उसी के पास अपराधी लोटे को भी देखकर लाला झाउलाल जी ने फौरन दो और दो

जोड़कर स्थिति को समझ लिया।

गिरने के पूर्व लोटा एक दुकान के सायबान से टकराया। वहाँ टकराकर उस दुकान पर खड़े उस अंग्रेज़ को उसने सांगोपांग स्नान कराया और फिर उसी के बूट पर आ गिरा। उस अंग्रेज़ को जब मालूम हुआ कि लाला झाउलाल ही उस लोटे के मालिक हैं तब उसने केवल एक काम किया। अपने मुँह को खोलकर खुला छोड़ दिया। लाला झाउलाल को आज ही यह मालूम हुआ कि अंग्रेज़ी भाषा में गालियों का ऐसा प्रकांड कोष है। इसी समय पं. बिलवासी मिश्र भीड़ को चीरते हुए आँगन में आते दिखाई पड़े। उन्होंने आते ही पहला काम यह किया कि उस अंग्रेज़ को छोड़कर और जितने आदमी आँगन में घुस आए थे, सबको बाहर निकाल दिया। फिर आँगन में कुर्सी रखकर उन्होंने साहब से कहा आपके पैर में शायद कुछ चोट आ गई है। अब आप आराम से कुर्सी पर बैठ जाइए। साहब बिलवासी जी को धन्यवाद देते हुए बैठ गए और लाला झाउलाल की ओर इशारा करके बोले —आप इस शख्स को जानते हैं? बिल्कुल नहीं। और मैं ऐसे आदमी को जानना भी नहीं चाहता जो निरीह राह चलतों पर लोटे के वार करे।





“मेरी समझ में ‘ही इज ए डेंजरस ल्यूनाटिक’ ;यानी, यह खतरनाक पागल है नहीं, मेरी समझ में ‘ही इज ए डेंजरस क्रिमिनल’ ;नहीं, यह खतरनाक मुजरिम है परमात्मा ने लाला झाउलाल की आँखों को इस समय कहीं देखने के साथ खाने की भी शक्ति दे दी होती तो यह निश्चय है कि अब तक बिलवासी जी को वे अपनी आँखों से खा चुके होते। वे कुछ समझ नहीं पाते थे कि बिलवासी जी को इस समय क्या हो गया है। साहब ने बिलवासी जी से पूछा तो क्या करना चाहिए?

“पुलिस में इस मामले की रिपोर्ट कर दीजिए जिससे यह आदमी फौरन हिरासत में ले लिया जाए।

“पुलिस स्टेशन है कहा!?”

“पास ही है, चलिए मैं बताऊँ”

“चलिए।”

“अभी चला। आपकी इजाज़त हो तो पहले मैं इस लोटे को इस आदमी से खरीद लूँ। क्यों जी बेचोगे?मैं पचास रुपये तक इसके दाम दे सकता हूँ।

लाला झाउलाल तो चुप रहे पर साहब ने पूछा इस लोटे के आप पचास रुपये क्यों दे रहे हैं?”

“आप इस लोटे को रपी बताते हैं?आश्चर्य! मैं तो आपको एक विज्ञ और सुशिक्षित आदमी समझता था।”

“आखिर बात क्या है, कुछ बताइए भी।”

“जनाब यह एक ऐतिहासिक लोटा जान पड़ता है। जान क्या पड़ता है, मुझे पूरा विश्वास है। यह वह प्रसिद अकबरी लोटा है जिसकी तलाश में संसार—भर के म्यूज़ियम परेशान हैं।”

“यह बात ? “



इस विवरण को सुनते-सुनते साहब की आँखों पर लोभ और आश्चर्य का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे कौड़ी के आकार से बढ़कर कौड़ी के आकार की हो गई। उसने बिलवासी जी से

पूछा— “तो आप इस लोटे का क्या करिएगा ?

“मुझे पुरानी और ऐतिहासिक चीज़ों के संग्रह का शौक है।”

“मुझे भी पुरानी और ऐतिहासिक चीज़ों के संग्रह करने का शौक है। जिस समय यह लोटा मेरे पर गिरा था, उस समय मैं यही कर रहा था। उस दुकान से पीतल की कुछ पुरानी मूर्तियाँ खरीद रहा था।”

“जो कुछ हो, लोटा मैं ही खरीदूँगा।”

“वाह, आप कैसे खरीदेंगे, मैं खरीदूँगा, यह मेरा हक है।”

“हक है?”

“ज़रूर हक है। यह बताइए कि उस लोटे के पानी से आपने स्नान किया या मैंने?”

“आपने।”

“वह आपके पैरों पर गिरा या मेरे?”

“आपके।”

“अगूठा उसने आपका भुरता किया या मेरा?”

“आपका।



बिलवासी जी अफसोस के साथ अपने रुपये उठाने लगे, मानो अपनी आशाओं की लाश उठा रहे हों। साहब की ओर देखकर उन्होंने कहा – “लोटा आपका हुआ, ले जाइए, मेरे पास ढाई सौ से अधिक नहीं हैं।”

यह सुनना था कि साहब के चेहरे पर प्रसन्नता की वूफची गिर गई। उसने झपटकर लोटा लिया और बोला— “अब मैं हँसता हुआ अपने देश लौटूँगा। मेजर डगलस की डींग सुनते—सुनते मेरे कान पक गए थे।

“मेजर डगलस कौन हैं?”

“मेजर डगलस मेरे पड़ोसी हैं। पुरानी चीज़ों के संग्रह करने में मेरी उनकी होड़ रहती है। गत वर्ष वे हिंदुस्तान आए थे और यहाँ से जहाँगीरी अंडा ले गए थे।

“जहाँगीरी अंडा?”

“हा!, जहाँगीरी अंडा। मेजर डगलस ने समझ रखा था कि हिंदुस्तान से वे ही अच्छी चीज़ें ले सकते हैं।

“पर जहाँगीरी अंडा है क्या?”

“आप जानते होंगे कि एक कबूतर ने नूरजहाँ से जहाँगीर का प्रेम कराया था। जहाँगीर के पूछने पर कि, मेरा एक कबूतर तुमने कैसे उड़ जाने दिया, नूरजहाँ ने उसके दूसरे कबूतर को उड़ाकर बताया था, कि ऐसे। उसके इस भोलेपन पर जहाँगीर दिलोजान से निछावर हो गया। उसी क्षण से उसने अपने को नूरजहाँ के हाथ कर दिया। कबूतर का यह अहसान वह नहीं भूला। उसके एक अंडे को बड़े जतन से रख छोड़ा। एक बिल्लोर की हाँडी में वह उसके सामने टँगा रहता था। बाद में वही अंडा जहाँगीरी अंडा के नाम से प्रसिद हुआ। उसी को मेजर डगलस ने पारसाल दिल्ली में एक मुसलमान सज्जन से तीन सौ रुपये में खरीदा।

“यह बात?”

“हा!, पर अब मेरे आगे दून की नहीं ले सकते। मेरा अकबरी लोटा उनके जहाँगीरी अंडे से भी एक पुश्त पुराना है।

“दो घंटे तक?”

“हाँ, और क्या, अभी मैं आपकी पीठ ठोककर शाबाशी दूँगा, एक घंटा इसमें लगेगा। फिर गले लगाकर धन्यवाद दूँगा, एक घंटा इसमें भी लग जाएगा।

“अच्छा पहले पाँच सौ रुपये गिनकर सहेज लीजिए।

“रुपया अगर अपना हो, तो उसे सहेजना एक ऐसा सुखद मनमोहक कार्य है कि मनुष्य उस समय सहज में ही तन्मयता प्राप्त कर लेता है। लाला झाउलाल ने अपना कार्य समाप्त करके पर देखा। पर बिलवासी जी इस बीच अंतर्मान हो गए।

उस दिन रात्रि में बिलवासी जी को देर तक नींद नहीं आई। वे चादर लपेटे चारपाई पर पड़े रहे। एक बजे वे उठे। धीरे, बहुत धीरे से अपनी सोई हुई पत्नी के गले से उन्होंने सोने की वह सिकड़ी निकाली जिसमें एक ताली बँधी हुई थी। फिर उसके कमरे में जाकर उन्होंने उस ताली से संदूक खोला। उसमें ढाई सौ वेफ नोट ज्यों—के—त्यों रखकर उन्होंने उसे बंद कर दिया। फिर दबे पाँव लौटकर ताली को उन्होंने पूर्ववत् अपनी पत्नी के गले में डाल दिया। इसके बाद उन्होंने हँसकर अँगड़ाई ली। दूसरे दिन सुबह आठ बजे तक चैन की नींद सोए।

प्रश्न-अभ्यास

—अन्नपूर्णानंद वर्मा



कहानी की बात

1. “लाला ने लोटा ले लिया, बोले कुछ नहीं, अपनी पत्नी का अदब मानते थे। लाला झाउलाल को बेढंगा लोटा बिलकुल पसंद नहीं था। फिर भी उन्होंने चुपचाप लोटा ले लिया। आपके विचार से वे चुप क्यों रहे? अपने विचार लिखिए।
2. “लाला झाउलाल जी ने फौरन दो और दो जोड़कर स्थिति को समझ लिया। आपके विचार से लाला झाउलाल ने कौन—कौन सी बातें समझ ली होंगी?
3. अंग्रेज़ के सामने बिलवासी जी ने झाउलाल को पहचानने तक से क्यों इनकार कर दिया था? आपके विचार से बिलवासी जी ऐसा अजीब व्यवहार क्यों कर रहे थे? स्पष्ट कीजिए।
4. बिलवासी जी ने रुपयों का प्रबंध कहाँ से किया था? लिखिए।



अनुमान और कल्पना

1. “इस भेद को मेरे सिवाए मेरा ईश्वर ही जानता है। आप उसी से पूछ लीजिए। मैं नहीं बताऊँगा।
बिलवासी जी ने यह बात किससे और क्यों कही? लिखिए।
2. “उस दिन रात्रि में बिलवासी जी को देर तक नींद नहीं आई।
समस्या झाउलाल की थी और नींद बिलवासी की उड़ी तो क्यों? लिखिए।
3. “लेकिन मुझे इसी जिंदगी में चाहिए।
“अजी इसी सप्ताह में ले लेना।



“सप्ताह से आपका तात्पर्य सात दिन से है या सात वर्ष से?
झाउलाल और उनकी पत्नी के बीच की इस बातचीत से क्या पता चलता है?
लिखिए।

क्या होता यदि



1. अंग्रेज़ लौटा न खरीदता?
2. यदि अंग्रेज़ पुलिस को बुला लेता?
3. जब बिलवासी अपनी पत्नी के गले से चाबी निकाल रहे थे, तभी उनकी पत्नी जाग जाती?

पता कीजिए

1. “अपने वेग में उल्का को लजाता हुआ वह आँखों से ओझल हो गया।
उल्का क्या होती है? उल्का और ग्रहों में कौन-कौन सी समानताएँ और अंतर होते हैं?
2. इस कहानी में आपने दो चीज़ों के बारे में मजेदार कहानियाँ पढ़ीं—अकबरी लोटे की कहानी और जहाँगीरी अंडे की कहानी।
आपके विचार से ये कहानियाँ सच्ची हैं या काल्पनिक?
3. अपने घर या कक्षा की किसी पुरानी चीज़ के बारे में ऐसी ही कोई मजेदार





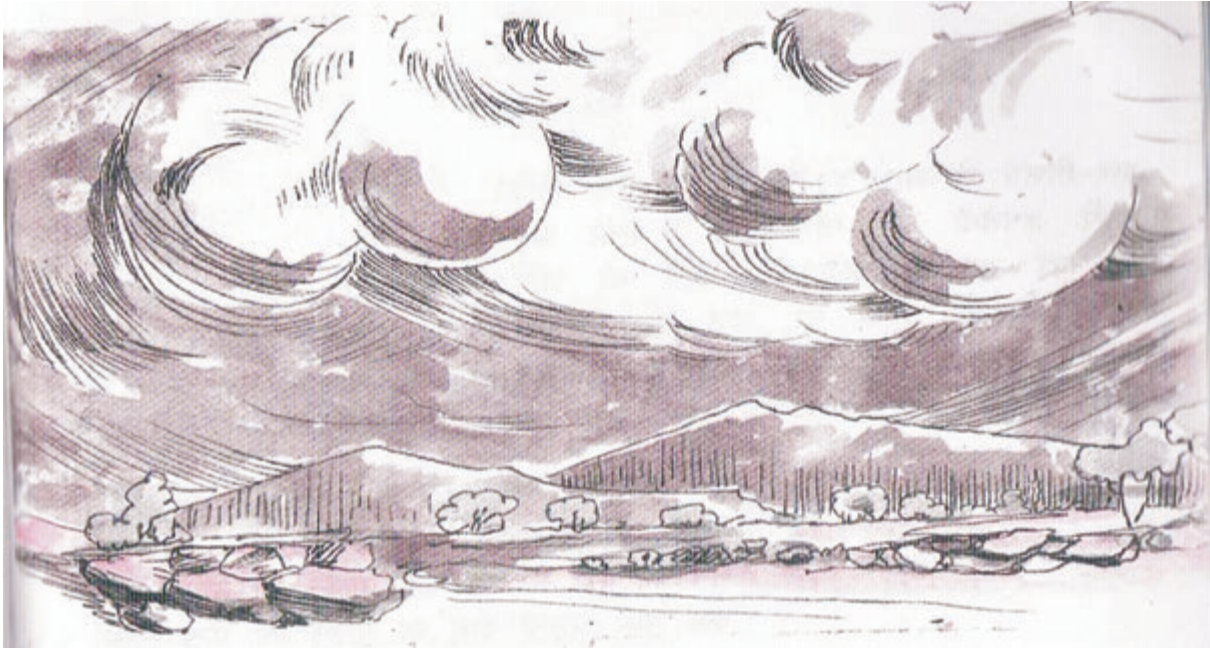
भाषा की बात

1. इस कहानी में लेखक ने जगह-जगह पर सीधी-सी बात कहने के बदले रोचक मुहावरों, उदाहरणों आदि के द्वारा कहकर अपनी बात को और अधिक मजेदार/रोचक बना दिया है। कहानी से वे वाक्य चुनकर लिखिए जो आपको सबसे अधिक मजेदार लगे।
2. इस कहानी में लेखक ने अनेक मुहावरों का प्रयोग किया है। कहानी में से पाच मुहावरे चुनकर उनका प्रयोग करते हुए वाक्य लिखिए।

शब्दार्थ

अदब	—	शिष्टाचार, लिहाज
डामलफासी	—	आजीवन कारावास का दंड, देश निकाला
मुंडेर	—	छत के आस-पास बनाई जाने वाली दीवार
सायबान	—	वह छप्पर या कपड़ा आदि का पर्दा जो धूप और वर्षा से बचाव के लिए मकान या दुकान के आगे लगाया जाता है
खुराफाती	—	शरारती
गढ़न	—	बनावट
सांगोपांग	—	पूरी तरह, उपर से नीचे तक
ईशाद	—	खोज, अन्वेषण





14

ओ नभ में मँडराते बादल



ओ नभ में मँडराते बादल बे—बरसे मत जा ।
मन के होठों पर रस की बिसरी पहचान जगा ।
पुरवा की लहरों में सुख की आतुरता उमगा ।
सूखे सुमनों को हरियाली का आभास दिखा ।
खींच क्षितिज पर शीतलता की कज्जल धूमशिखा ।
आज वर्ष की पहली वर्षा का पहला झोंका
इतने दिन धरती ने प्रखर पिपासा को रोका ।
ओ नभ में मँडराते बादल बे—बरसे मत जा ।

कब से जल—बूँदों को विह्वल शैल निहार रहे,
कब से आतप—दग्ध वनों के प्राण पुकार रहे
मन जलता है, जैसे तृष्णा का क्षण जलता है,
सूखे मूल कगारों का वीरान मचलता है ।
आज मधुर स्वप्नों में पावस का आकाश भरा ।



गीतों की गूँजों से मर्मर का उल्लास हरा ।
ओ मादक उन्मादक बादल बे—बरसे मत जा ।

जाग उठी मरु—मरु में सुख की वाष्पाकुल आशा ।
इस निदाघ से जला प्रकृति का रोम—रोम प्यासा ।
थकी अनमनी धूप माँगती है जलमय बाँहें ।
डूब गई तम में नीड़ाकुल विहगों की छाँहें ।
खेतों—खलिहानों, मुँड़ेरों पर, छत पर, घर—घर ।
हेर रहे अगणित हम तुमको जल वाले जलधर ।
उमड़ बरसने वाले बादल बे—बरसे मत जा ।

है अनदेखी बान तुम्हारी, तरसाते जग को ।
पुरवा की थपकी दे—देकर भरमाते जग को ।
मन की बूँदों से कब तक जीवन को तृप्ति मिले ।
कब तक जलती बालू पर यौवन का फूल खिले ।
तुम बरसो फिर से धरती का तन शीतल हो ले ।
तुम बरसो मन की थकान का मन मिसरी घोले ।
ओ नभ के मँडराते बादल बे—बरसे मत जा ।

—रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

प्रश्न-अभ्यास



बोध और सराहना

1. इस गीत में कवि बादल से क्या—क्या आग्रह कर रहा है?
2. वर्षा के बिना जड़—चेतन सभी किस प्रकार व्याकुल हो उठे हैं?
3. तपती धरती और जलने मन—प्राणों में वर्षा की संभावना—मात्र से क्या—क्या परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं?
4. गीत से उन पंक्तियों का चयन करें जिनमें जहाँ—तहाँ मेघ की ओर टकटकी लगाए लोगों का वर्णन किया गया है ।
5. इस गीत में बादल को अनेक संबोधनों से पुकारा गया है । उन्हें चुनें और बताएँ कि आपको कौन—सा संबोधन सर्वाधिक सुंदर लगा और क्यों?



6. इस कविता में 'मन के होठ', 'मन की बूँद', 'मन की थकान' जैसे कुछ प्रयोग किए गए हैं। 'कल्पना' शब्द को लेकर इसी प्रकार के तीन प्रयोग करें।
7. भाव स्पष्ट करें:—
 - क. थकी अनमनी धूप माँगती है जलमय बाँहें।
 - ख. मन की बूँदों से कब तक जीवन को तृप्ति मिले।
8. इस गीत में कई जगह प्रकृति और निर्जीव वस्तुओं में मनुष्य की—सी चेष्टाएँ और क्रियाकलाप दिखाए गए हैं। जैसे—“कब से जल—बूँदों को विह्वल शैल निहार रहें। इसी प्रकार के तीन अन्य उदाहरण इस गीत से छाँटें।



योग्यता—विस्तार

1. इस कविता का हाव—भाव के साथ सस्वर वाचन करें।
2. वर्षा से संबंधित कुछ गीतों और उन्हीं से संबंधित चित्रों का चार्ट तैयार करके अपनी कक्षा में लगाएँ।
3. वर्षा पर प्रायः सभी कवियों ने कविताएँ रची हैं। उनकी कविताओं का संकलन करके 'पावन—अंक' नाम से हस्तलिखित पत्रिका निकालें।



गोरी सूरत, घनी काली भौहें, छोटी-छोटी आँखें, नुकीली नाक, बड़ी-बड़ी और गुछी हुई विरल मूँछों वाला यह मुसकराता चेहरा किसका है? यह चेहरा प्रेमचंद का है। लगता है, अभी हँसने वाले हैं। लगता है, अभी ज़ोरों के कहकहे लगाएँगे।

वाराणसी से छः किलोमीटर दूर लमही में शनिवार, 31 जुलाई, सन् 1880 को धनपत राय का जन्म हुआ। माँ-बाप ने नाम रखा था धनपत। चाचा लाड़-प्यार में कहा करते थे-नवाब।

पिता का नाम था अजायब राय। डाकखाने में किरानी थे, इसी से लोग उन्हें मुंशी अजायब लाल कहा करते। माता का नाम था-आनंदी। अक्सर बीमार रहतीं। पिता को दवा-दारु से फुरसत नहीं मिलती थी।

धनपत सात वर्ष का ही था कि माँ चल बसीं। माँ के बिछोह ने धनपत के बचपन का सारा रस सोख लिया। कुछ वर्ष बाद मुंशी अजायब लाल ने दूसरी शादी की। अभाव और अभियोग तो पहले से थे ही, विमाता का निष्ठुर व्यवहार भी उनमें आ मिला। नई माँ बात-बात पर डाँटती। उसे धनपत में बुराइयाँ-ही-बुराइयाँ दीखतीं।

कदाचित् प्रेमचंद अपने उपन्यास 'कर्मभूमि' के पात्र चंद्रकांत के द्वारा खुद अपनी ही व्यथा सुना रहे हैं..... "बचपन वह उम्र है जब इंसान को मुहब्बत की सबसे ज़्यादा ज़रूरत पड़ती है। उस वक़्त पौधे को तरी मिल जाए तो ज़िंदगी-भर के लिए उसकी जड़ें मज़बूत हो जाती हैं। मेरी माँ के देहांत के बाद मेरी रूह को खुराक नहीं मिली। वही भूख मेरी ज़िंदगी है।"

और, यही कारण था कि बालक धनपत घर-आँगन से भागकर बाहर खुले मैदान में, अमराई में, खेतों की तरफ़ निकल जाता था। साथियों के साथ गुल्ली-डंडा खेलता था। पेड़ों पर चढ़ता था। आम की कैरियाँ चुनता था। मटर की फलियाँ तोड़ता था हवाई किले बनाता था।





गरीबी, घुटन और रूखेपन से त्राण पाने के लिए बालक धनपत ने इस तरह एक सहज रास्ता निकाल लिया था। रोने-खीझने वाली परिस्थितियों पर कहकहे हावी होने लगे। प्रेमचन्द ने बचपन से ही मुसीबतों पर हँसना सीखा था।

धनपत के छात्र जीवन की आपबीती प्रेमचंद की कहानियों, उपन्यासों और आत्मकथाओं में बिखरी पड़ी है—“मेरी उम्र आठ साल की थी। अपने चचेरे भाई हलधर के साथ मैं पास के गाँव में एक मौलवी साहब के यहाँ पढ़ने जाया करता था। हम दोनों सवेरे बासी रोटियाँ खा लेते, दोपहर के लिए मटर और जौ का चबेना लेकर चल देते फिर तो सारा दिन अपना था। मौलवी साहब के यहाँ कोई हाज़िरी का रजिस्टर तो था नहीं और गैर—हाज़िरी का जुर्माना ही देना पड़ता था। फिर डर किस बात का? कभी—कभी हम हफ्तों गैरहाज़िर रहते, पर मौलवी साहब से ऐसा बहाना कर देते कि उनकी चढ़ी तयोरियाँ उतर जातीं।”

पिता का तबादला गोरखपुर हुआ। बच्चे भी साथ गए। गाँव के मदरसे से शहर का स्कूल अच्छा था। धनपत की तबीयत पढ़ने में लग गई। गुल्ली—डंडे का खेल पीछे छूट गया। शहरी नज़ारे आगे सरक आए, किताबें चाटने का चस्का इसी उम्र में लगा। हज़ारों कहानियाँ और सैकड़ों छोटे—मोटे उपन्यास धनपत ने इसी उम्र में पढ़ डाले। यह साहित्य उर्दू का था।

हमारा कहानीकार शायद पैदा हो चुका था। रात को अकेले में ढिबरी की मद्धिम रोशनी में उसने गल्प रचना शुरू कर दी थी। बीसियों पन्ने यों ही लिख जाना और उन्हें फाड़ डालना यह सब कितना अच्छा लगता होगा तब धनपत को!

उन्ही दिनों पिता ने शादी करवा दी। निश्चय ही उसमें सौतेली माँ की भी राय रही होगी। जो लड़की धनपत के लिए चुनी गई थी, वह धनपत को कभी पसंद नहीं आई। पुत्र के पाँवों में ‘अष्टधातु’ की बेड़ियाँ डालकर मुंशी अजायब लाल ने हमेशा के लिए आँखें मूँद लीं। परिवार पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा।

अपनी इन दिनों की दशा का वर्णन प्रेमचंद ने ‘जीवन सागर’ में किया है, “पाँव में जूते न थे, देह पर साबुत कपड़े न थे। महँगाई अलग थी। रुपये में बीस सेर के जौ थे। स्कूल में साढ़े तीन बजे छुट्टी मिलती थी। काशी के क्वीन्स कालेज में पढ़ता था। हेडमास्टर ने फीस माफ़ कर दी थी। इम्तहान सिर पर था और मैं बाँस फाटक, एक लड़के को पढ़ाने जाता था। जाड़ों के दिन थे। चार बजे पहुँचता था, पढ़ाकर छः बजे छुट्टी पाता। वहाँ से मेरा घर देहात में आठ मीलोमीटर पर था। तेज़ चलने पर भी आठ बजे से



पहले घर न पहुँच पाता। प्रातः काल आठ बजे फिर घर से चलना पड़ता था। कभी वक्त पर स्कूल न पहुँचता। रात को खाना खाकर कुप्पी के सामने पढ़ने बैठता और न जाने कब सो जाता। फिर भी हिम्मत बाँधे रहता।”

गरीबी..... पिता की मृत्यु..... खर्च में बढ़ती असामान्य परिश्रम कुप्पी के सामने बैठकर रात की पढ़ाई

जैसे-तैसे द्वितीय श्रेणी में मैट्रिक पास किया। गणित से बेहद घबराते थे। इंटरमीडिएट में दो बार फेल हुए। निराश होकर परीक्षा का विचार ही छोड़ दिया। आगे चलकर दस-बारह वर्ष बाद, जब गणित के विकल्प में दूसरा विषय लेना संभव हो गया तभी धनपत राय ने यह परीक्षा पास ही।

हमारे भावी उपन्यास-सम्राट के पास एक फूटी कौड़ी न थी। दो दिन एक-एक पैसे का खाकर काटे थे। महाजन ने उधार देने से इनकार कर दिया था। बड़ी विवशता से पुरानी पुस्तकों को लेकर एक पुस्तक-विक्रेता के पास पहुँचे। वहीं एक सौम्य पुरुष से, जो एक छोटे-से स्कूल के प्रधानाध्यापक थे, उनका परिचय हुआ। उन्होंने इनकी गरीबी और विवशता के साथ ही कुशाग्रता और लगन से प्रभावित होकर अपने यहाँ सहायक अध्यापक के रूप में नियुक्त करने का आश्वासन दिया और दूसरे दिन इन्हें दस रुपये मासिक वेतन पर नियुक्त किया।

1919 में बी.ए. भी कर लिया विषय लिए थे अंग्रेजी, फ़ारसी, इतिहास। वे एम.ए. भी करना चाहते थे, क़ानून भी पढ़ना चाहते थे। लेकिन, परीक्षाओं की तरफ़ से उदास हो गए थे। जब उमंग थी तब गणित ने बाधा पहुँचाई, अब जब वह बाधा दूर हुई, तो जीवन का लक्ष्य ही बदल चुका था।

स्कूल मास्टर का उनका जीवन भारी घुटन और बेबसी का जीवन रहा तो क्या प्रेमचंद की कहानियों में इसी का उल्लेख है? पंडित चंद्रधर के रूप में स्वयं प्रेमचंद कहते हैं। “मुर्दरिंसी तो कर ली थी, किंतु सदा पछताया करते थे कि कहाँ से जंगल में आ फँसे? यदि किसी अन्य विभाग में नौकरी की होती तो अब तक हाथ में चार पैसे होते, आराम से जीवन व्यतीत होता। यहाँ तो महीने-भर प्रतीक्षा करने के बाद कहीं पंद्रह रुपये देखने को मिलते हैं। वह भी इधर आए, उधर गए। न खाने का सुख न पहनने का आराम। हमसे तो मज़दूर ही भले।”

इनकी पहली शादी चाची (विमाता) और चाची के पिता की राय से रचाई गई थी। लड़की न केवल बदसूरत थी, बल्कि प्रेमचंद से उम्र में बड़ी थी, ढीठ और नासमझ भी थी। पति से भी लड़ती थी और पति की सौतेली माँ से भी।

दस-बारह वर्ष तक, यानी 1905 तक तो धनपतराय ने पहली बीबी का साथ जैसे-तैसे निभाया, किंतु जब उसके साथ एक दिन भी निभाना मुश्किल हो गया तो शिवरानी देवी नाम की एक बालविधवा से शादी करके धनपतराय ने समाज के सामने भारी साहस और आत्मबल का परिचय दिया।



धनपतराय पढ़ाकू तो थे ही, कलम भी चलने लगी। मैट्रिक पास करने से पहले ही उनको लिखने का चस्का लग गया था। पढ़ाई और ट्यूशन आदि से जो वक्त बचता, वह सारा—का—सारा किस्से—कहानियाँ पढ़ने में लगाते। किस्से—कहानियों का जो भी असर दिमाग पर पड़ता, उसे अपनी सहज कल्पनाओं में घोल—घोल कर मुंशी जी नई कथावस्तु तैयार करने लगे और वह कागज़ पर उतरने भी लगी।

1901—2 में उनके एक—दो उपन्यास निकले। कहानियाँ 1907 में लिखनी शुरू कीं। अंग्रेज़ी में रवीन्द्रनाथ की नई गल्पें पढ़ी थीं, मुंशी जी ने उन गल्पों के उर्दू रूपांतर पत्रिकाओं में छपवाए। पहली कहानी थी 'संसार का सबसे अनमोल रत्न' जो 1907 में कानुपर के उर्दू मासिक 'ज़माना' में प्रकाशित हुई। 'ज़माना' में धनपतराय की अन्य रचनाओं का प्रकाशन 1903—4 से ही शुरू हो गया था। 1904 के अंत तक 'नवाब राय' ज़माना के स्थायी और विशिष्ट लेखक हो चुके थे।

1905 तक आते—आते प्रेमचंद तिलिस्मी, ऐय्यारी ओर काल्पनिक कहानियों के चंगुल से छूटकर राष्ट्रीय और क्रांतिकारी भावनाओं की दुनिया में प्रवेश कर चुके थे। 'ज़माना' उस समय की राष्ट्रीय पत्रिका थी। सभी को देश की गुलामी खटकती थी, विदेशी शासन की सुनहरी जंजीरों के गुण गाने वाले गद्दार देश—द्रोहियों के खिलाफ़ सभी के अंदर नफ़रत खेलती थी। शाम को 'ज़माना' के दफ़्तर में घंटों देशभक्तों का अड़्डा जमता। प्रेमचंद को राष्ट्रीयता की दीक्षा इसी अड़्डे पर मिली थी। एक साधारण कथाकार वहीं 'युगद्रष्टा साहित्यकार' के रूप में ढलने लगा। बड़ी—से—बड़ी बातों को सीधे और संक्षेप में कहना या लिखना प्रेमचंद ने यहीं सीखा।

चाचा का प्यार का नाम नवाब राय शुरू की रचनाओं के साथ वर्षों तक चलता रहा, किंतु 1910—11 में 'सोज़े वतन' की ज़ब्ती के साथ 'नवाब राय' की नवाबी खत्म हो गई, बाद में 'ज़माना' के पाठकों का प्रेमचंद से परिचय हुआ और 'नवाब राय' न जाने किस पर्दे की ओट में सदा के लिए छिप गए। बात यह थी कि 'सोज़े वतन' की ज़ब्ती के बाद अंग्रेज़ी सरकार और उसके पिट्टुओं की नज़र में 'नवाब राय' काँटे की तरह खटकने लगे थे। कई तरह की पाबंदियाँ लग गईं नवाब राय पर।

नई पत्नी के साथ रहने लगे तब से लिखाई का सिलसिला जम गया। 1905 से 1920 के दरम्यान प्रेमचंद ने बहुत कुछ लिखा दसियों छोटे—बड़े उपन्यास, सैकड़ों कहानियाँ, पत्र—पत्रिकाओं में निबंध और आलोचनाएँ भी कम नहीं लिखीं। मास्टरी के दिनों में भी लिखते रहे। स्कूलों के सब—डिप्टी इंस्पेक्टर थे, अक्सर दौरे पर रहना होता था, फिर भी रोज़ कुछ—न—कुछ लिख लेते थे।

1920 ई. के बाद ज़्यादातर वे हिंदी में ही लिखने लगे। 'माधुरी' (लखनऊ) के संपादक होने पर उनकी प्रतिभा और योग्यता की बूँद—बूँद हिंदी संसार को मिलने लगी। फिर भी 'ज़माना' को प्रेमचंद की मौलिक उर्दू—रचनाएँ लगातार मिलती रहीं।

1930 में प्रेमचंद की कहानियों का एक और संकलन ज़ब्त हुआ—'समर यात्रा'।



प्रकाशित होते ही अंग्रेजी सरकार ने इस पुस्तक को आपत्तिजनक घोषित कर दिया। सरस्वती प्रेस से पुस्तक की सारी प्रतियाँ उठा ली गई।

अब वे अपना निजी पत्र निकालना चाहते थे। पत्र-पत्रिकाएँ संपादित करने की दीक्षा दरअसल प्रेमचंद को कानपुर में ही मिल चुकी थी। सन् 1905 से ही 'जमाना' और 'आज़ाद' के कालम उनकी कलम के लिए 'खेल का मैदान' बन चुके थे। सन् 1921-22 में काशी से निकलने वाली मासिक पत्रिका 'मर्यादा' का संपादन बड़ी कुशलता से किया था। अब वे मँजे हुए पत्रकार थे। फलतः सन् 1930 में 'हंस' निकला और 1932 में 'जागरण'।

हृद दर्जे की ईमानदारी और अपनी ड्यूटी अच्छी तरह निभाने की मुस्तैदी, खुद तकलीफ़ झेलकर दूसरों को सुख पहुँचाने की लगन, सौ-सौ बंधनों में जकड़ी हुई भारत माता की स्वाधीन के लिए आतुरता, बाहरी और भीतरी बुराइयों की तरफ़ से लोगों को आगाह रखने का संकल्प, हर तरह के शोषण का विरोध अपनी इन खूबियों से प्रेमचंद खूब लोकप्रिय हो उठे।

प्रेमचंद का स्वभाव बहुत विनम्र था, किंतु उनमें स्वाभिमान कूट-कूटकर भरा था। दिखावा उन्हें बिलकुल पसंद नहीं था..... कुरता और धोती, 1920 के बाद गांधी टोपी अपना ली थी।

सरकारी नौकरी और स्वाभिमान में संघर्ष चलता ही रहता था। आखिर में जीत हुई स्वाभिमान की। 1920 में सरकारी सेवा से त्यागपत्र दे दिया और गाँव जाकर जम गए। कलम चलाकर 40-50 रुपये की फुटकर मासिक आमदनी होने लगी। बड़े संतोष और धीरज से वे दिन प्रेमचंद ने गुज़ारे।

1921 में काशी के नामी देशभक्त बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने 150 रुपये मासिक पर प्रेमचंद को 'मर्यादा' का संपादक बना लिया। पहले संपादक बाबू संपूर्णानंद असहयोग आंदोलन में गिरफ़्तार होकर जेल पहुँच गए थे। 'मर्यादा' को सँभालने के लिए किसी सुयोग्य संपादक की आवश्यकता थी।

1922 में संपूर्णानंद जी जेल से छूटे तो उन्हें 'मर्यादा' वाला काम वापस मिला। लेकिन बाबू शिवप्रसाद गुप्त प्रेमचंद को छोड़ना नहीं चाहते थे। काशी विद्यापीठ में उन्हें स्कूल विभाग का हेडमास्टर नियुक्त कर दिया।

डेढ़-दो वर्ष प्रेमचंद काशी विद्यापीठ में रहे होंगे। आगे चलकर उन्हें महसूस हुआ कि विद्यापीठ को पैसे की तंगी है। ऐसी स्थिति में वहाँ लदे रहना उन्हें ठीक नहीं जँचा। दूसरी बात यह भी थी कि प्रेमचंद स्वाधीनता-संग्राम में कभी जेल नहीं गए थे। विद्यापीठ जैसी राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओं में जेल-यात्रा किसी शिक्षक के लिए साधारण योग्यता नहीं, विशेष योग्यता समझी जाती थी।

1930 में प्रेमचंद स्वयं राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में कूद पड़ना चाहते थे। सत्याग्रहियों की क़तार में शामिल होकर, पुलिस की लाठियों के मुकाबले डटना चाहते थे। किंतु जेल जाने का उनका मनोरथ अधूरा ही रह गया।



पत्नी ने सोचा कमजोर हैं, अक्सर बीमार रहते हैं। इनको जेल नहीं जाने दूँगी। सो वे आगे बढ़ीं। सत्याग्रही महिलाओं की कतार में शामिल हुईं। गिरफ्तार होकर अपने जत्थे के साथ जेल पहुँच गईं।

प्रेमचंद मन मसोस कर रह गए। मजबूरी थी, पर तसल्ली थी। “हर परिवार से एक आदमी को जेल जाना ही चाहिए.....” उन दिनों यह भावना जोर पकड़ चुकी थी।

यह दूसरी बात है कि वे कभी गिरफ्तार नहीं हुए, कभी जेल न गए, मगर प्रेमचंद स्वाधीनता-संग्राम के ऐसे सेनापति थे जिनकी वाणी ने लाखों सैनिकों के हृदय में जोश भर दिया था। स्वाधीनता के लिए जनता की लड़ाई का समर्थन करते समय प्रेमचंद यह कभी नहीं भूले कि आज़ादी केवल एक व्यक्ति के जीवन को सुखमय नहीं बनाएगी, मुट्ठीभर आदमियों के लिए ही ऐशो-आराम नहीं लाएगी..... वह ‘बहुजन-सुखाय, बहुजन हिताय’ होगी।

1923 में ‘सरस्वती प्रेस’ चालू हुआ। प्रेमचंद की आज़ाद तबीयत को नौकरी भाती नहीं थी। स्वाधीन रहकर लिखने-पढ़ने का धंधा करना चाहते थे। प्रेस खोलते वक्त उनके दिमाग में यही एक बात थी कि अपनी किताबें आप ही छापते रहेंगे। मगर प्रेमचंद अपने प्रेस को वर्षों तक नहीं चला सके, किताबों का प्रकाशन करके कागज़ और छपाई-बँधाई का खर्चा निकालना मुश्किल था।

1930 तक प्रेस की हालत ख़राब रही। फिर भी वह प्रेमचंद का लहू पी-पीकर किसी तरह चलता रहा। इसमें जो कुछ कसर थी, उसके ‘हंस’ और ‘जागरण’ ने पूरा कर दिया। घाटा, घाटा, घाटा और घाटा! कर्ज़, कर्ज़ और कर्ज़!

बार-बार निश्चय करते थे कि अब दुबारा नौकरी नहीं करेंगे, अपनी किताबों में गुज़ारे लायक रकम निकल ही आएगी..... बार-बार जमकर प्रेस में बैठते थे, बार-बार पुराना कर्ज़ पटाकर नये सिरे से मशीन के पुर्जों में तेल डालते थे..... काम बढ़ता था, परेशानियाँ बढ़ती थीं, बुढ़ापा भी उसी रफ़्तार से आगे बढ़ता जाता था।

पेट की बीमारियाँ हमेशा प्रेमचंद के पीछे पड़ी रहीं। लेकिन चिंता का रोग उनका सबसे बड़ा रोग था। परिवार बढ़ा था, आमदनी कम। थोड़ी-बहुत कटौती करके शिवरानी जब भी कुछ बचातीं, उसे आप प्रेस के पेट में डाल देते।

पढ़ने-लिखने का सारा काम रात को करते थे। तंदुरुस्ती बीच-बीच में टूट जाती थी, दवा-दारु के लिए शिवरानी रुपये देतीं, तो वे रकम को भी प्रेस में खर्च कर डालते, फिर वैद्यों और हकीमों से सस्ती दवाएँ लेते रहते। आराम बिल्कुल नहीं करते थे। पूरी नींद सोते नहीं थे। खाना भी मामूली किस्म का खाते।

1936 के बाद दशा कुछ बदली ज़रूर, मगर प्रेमचंद का परिश्रम और भी बढ़ गया। उनका जीवन ऐसा दीप था जिसकी लौ मदधिम नहीं, तेज प्रकाश देने को मदबूर थी पर उस दीप में कभी पूरा-पूरा तेल नहीं डाला गया। लौ हमेशा बत्ती के रेशे को ही जलाती रही।



उनकी बेचैनी इसीलिए थी कि वे चाहते थे कि जीवन—दीप का प्रकाश दूर—दूर तक फैले, वक्त पर फैले, अच्छी तरह फैले। अपनी सारी किताबें, अपना सारा साहित्य, अपने प्रेस में ही छपवाकर समूचे देश में फैला देना चाहते थे। किसानों, मज़दूरों, युवकों, विद्यार्थियों, स्त्रियों और अछूतों की दर्दनाक ज़िदगी को आधार बनाकर जो कोई भी लिखे, सभी कुछ छापकर जनता को सजग—सचेत बना देने का संकल्प प्रेमचंद के अंदर हिलोरे ले रहा था। अधिक—से—अधिक लिखते जाना, अधिक—से—अधिक छापते जाना, अधिक—से—अधिक लोगों को जागरूक बनाते जाना..... शोषण, गुलामी, ढोंग, दंभ, स्वार्थ, रूढ़ि, अन्याय, अत्याचार इन सबकी जड़े खोद डालना और धरती को नई मानवता के लायक बनाना.....यही प्रेमचंद का उद्देश्य था।

1934 के बाद प्रेमचंद को लगने लगा कि अब वह दो—चार वर्ष से ज़्यादा नहीं जिँगेंगे, इससे उनके अंदर दिन—रात लिखने की, दिन—रात काम करने की भावना ज़ोर पकड़ती गई।

आजीवन संघर्षरत और अभावग्रस्त लेखक ने अपना स्वास्थ्य चौपट कर लिया। अंतिम दिनों में वे संतरे लेने लगे थे। पथ्य—परहेज़ पर भी थोड़ा—बहुत ध्यान दिया था, लेकिन अब तक तंदुरुस्ती बिल्कुल रूठ चुकी थी।

वे अच्छी तरह जानते थे कि दुबला—पतला, लक्कड़—सरीखा यह बीमार आदमी धनपतराय हो सकता है, प्रेमचंद कोई और होगा। प्रेमचंद कभी बीमार नहीं पड़ेगा। प्रेमचंद हमेशा स्वस्थ रहेगा। प्रेमचंद हमें ज़िंदा रहेगा। कहकहे लगाता रहेगा।

तभी तो हानि—लाभ की भावनाओं से निर्लिप्त रहकर प्रेमचंद अंत तक लिखते रहे।

नींद नहीं आती थी। बीमारी बढ़ गई थी। प्रेस जाना बंद था। फिर भी, आप घर वालों की नज़रें बचाकर उठ जाते और क़लम तेज़ी से चल पड़ती.....इतनी तेज़ी से कि जीवन समाप्त होने से पहले ही सब कुछ लिख देना चाहते थे।

‘मंगलसूत्र’ के बीसियों सफ़े प्रेमचंद ने अपनी मृत्युशय्या पर लिखे। ‘महाजनी सभ्यता’ और ‘कफ़न’ और प्रगतिशील लेखको की पहली कांफ्रेंस के लिए अध्यक्ष का भाषण..... काफ़ी कुछ उन्होंने हमें अपनी अंतिम क्षणों तक दिया।

“मैं मज़दूर हूँ, जिस दिन न लिखूँ, उस दिन मुझे रोटी खाने का अधिकार नहीं है”....
... ये शब्द उनके होठों के केवल आभूषण ही न थे बल्कि सच थे।

फ़िल्मों के द्वारा जनता तक अपने संदेशों को प्रभावशाली ढंग से पहुँचाने और साथ ही अभावों से मुक्ति पाने के लिए वे बंबई गए। किंतु धनपत को धनपतियों का सहवास और बंबई का प्रवास रास नहीं आया, वह उनकी अभिलाषाओं की पूर्ति नहीं कर पाया।

फिर वही प्रेस। फिर वही प्रकाशन, फिर वही घिसाई। रातों—रात जागकर प्रेमचंद ने ‘गोदान’ पूरा किया।

‘गोदान’ छपकर निकल आया था कि उनकी लेखनी ‘मंगलसूत्र’ पर तेज़ी से चल

रही थी।

मरते-मरते प्रेमचंद इस उपन्यास का पूरा करना चाहते थे। चार ही अध्याय लिख पाए थे..... खाना नहीं हज़म होता था। खून की कै करने लगे थे। पेट में पानी भर गया था। दूध, बाली, फलों का रस तक नहीं पचा पाते थे। पर इतने पर भी काम करने की ललक पीछा नहीं छोड़ती थी, लिखने की अभिलाषा शांत नहीं हो पाती थी, देश को अपने जीवन, अनुभव और अपने विचारों की अंतिम बूँद तक दे जाने की इच्छा चैन नहीं लेने देती थी।

8 अक्टूबर, 1936, रात का पिछला पहर। प्रेमचंद ने हमेशा के लिए अपनी आँखें मूँद लीं। अभी साठ के भी नहीं हुए थे। 56 वर्ष की आयु क्या कोई लंबी आयु थी?

संयोग तो देखिए, विश्व के तीन महान् उपन्यासकारों.....प्रेमचंद, मैक्सिम गोर्की और शरत्चंद्र.....का देहावसान उसी वर्ष हुआ।

—नागार्जुन



प्रश्न-अभ्यास



बोध और विचार

- बचपन में प्रेमचंद घर से भागकर खेतों, बगीचों और मैदानों में क्यों चले जाते थे?
 - वे घर की चारदिवारी में बँधकर बैठता नहीं चाहते थे?
 - वे स्वभाव से चंचल और खिलाड़ी थे।
 - वहाँ जाकर अपनी कहानियों और उपन्यासों के लिए कथानक सोचते थे।
 - वे घर पर सौतेली माँ से परेशान हो जाते थे।
 - खुली हवा में घूमना उन्हें बेहद पसंद था।
- प्रेमचंद को महान् लेखक बनाने में निम्नांकित में से सबसे अधिक योगदान किसका था?

क. तीव्र लगन	ग. घोर गरीबी
ख. उनका युग	घ. हिंदी में अच्छे कथाकारों की कमी
- “लगन है..... हैं।” “लगता है,लगाएँगे।”
—इन पंक्तियों से प्रेमचंद के स्वभाव की किस विशेषता का पता चलता है?
- प्रेमचंद के बचपन की कठिनाइयों का वर्णन करें।
- “उनकी दूसरी पत्नी शिवरानी उनके लिए वरदान जैसी साबित हुई।” कैसे?
- स्वतंत्रता आंदोलन में प्रेमचंद के योगदान जैसी साबित हुई।” कैसे?
- प्रेमचंद के व्यक्तित्व की कोई तीन विशेषताएँ उनके जीवन की उपयुक्त घटनाएँ उद्धृत करके बताइए।



8. प्रेमचंद के साहित्य का संक्षिप्त परिचय दें।
9. प्रेमचंद की असामयिक मृत्यु के निम्नांकित कारण हो सकते हैं। तुम्हारी दृष्टि से सबसे प्रमुख कारण क्या था, तर्कपूर्ण उत्तर दें।
 - क. बिना विश्राम किए वे दिन—रात लिखते रहते थे।
 - ख. उनका बचपन घोर गरीबी और उपेक्षा में बीता।
 - ग. उन्हें कभी पौष्टिक आहार नहीं मिला।
 - घ. वे आजीवन आर्थिक संकट से जूझते रहे।
 - ङ. उनका इलाज सही ढंग से नहीं हुआ।



भाषा—अध्ययन

1. जिस प्रकार लेखक ने नपे—तुले शब्दों में प्रेमचंद का शब्दचित्र अंकित किया है वैसे ही किसी कवि या लेखक का शब्दचित्र अंकित करें।
जैसे—प्रसाद, पंत, निराला, दिनकर, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामचंद्र शुक्ल आदि।
2. निम्नांकित वाक्य—युग्मों से जो वाक्य प्रभावशाली लगे वैसा ही एक—एक वाक्य लिखें:—
 - क. पिता का नाम था अजायब राय।
पिता का नाम अजायव राय था।
 - ख. फिर डर किस बात का?
मुझे किसी बात का डर न था।
 - ग. वहीं एक सौम्य पुरुष से, जो एक छोटे—से स्कूल के प्रधानाध्यापक थे, उनका परिचय हुआ।
—वहीं एक सौम्य पुरुष से उनका परिचय हुआ, जो एक छोटे—से स्कूल में प्रधानाध्यापक थे।



योग्यता—विस्तार

1. प्रेमचंद का कोई उपन्यास पढ़ें और उसका सारांश तीन पृष्ठों में लिखें तथा अपने साथियों को सुनाएँ।
2. प्रेमचंद के उपन्यासों और उनकी बहुचर्चित कहानियों की सूची बनाएँ।
3. प्रेमचंद पर अधिक जानकारी के लिए निम्नांकित पुस्तकें पठनीय हैं:
 - क. प्रेमचंद घर में
 - ख. कलम का सिपाही
 - ग. प्रेमचंद (एन.सी.ई.आर.टी. प्रकाशन)
 - घ. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस द्वारा प्रकाशित नागार्जुन द्वारा लिखित प्रेमचंद की जीवनी।

बाज और साँप



समुद्र के किनारे उंचे पर्वत की अंधेरी गुफा में एक साँप रहता था। समुद्र की तूफानी लहरें धूप में चमकतीं, झिलमिलातीं और दिन भर पर्वत की चटानों से टकराती रहती थीं।

पर्वत की अँमोरी घाटियों में एक नदी भी बहती थी। अपने रास्ते पर बिखरे पत्थरों को तोड़ती, शोर मचाती हुई यह नदी बड़े शोर से समुद्र की ओर लपकती जाती थी। जिस जगह पर नदी और समुद्र का मिलाप होता था, वहाँ लहरें दूध के झाग—सी सफेद दिखाई देती थीं।

अपनी गुफा में बैठा हुआ साँप सब कुछ देखा करता लहरों का गर्जन, आकाश में छिपती हुई पहाड़ियाँ, टेढ़ी—मेढ़ी बल खाती हुई नदी की गुस्से से भरी आवाजें। वह मन ही मन खुश होता था कि इस गर्जन—तर्जन के होते हुए भी वह सुखी और सुरक्षित है। कोई उसे दुख नहीं दे सकता। सबसे अलग, सबसे दूर, वह अपनी गुफा का स्वामी है। न किसी से लेना, न किसी से देना। दुनिया की भाग—दौड़, छीना—झपटी से वह दूर है। साँप के लिए यही सबसे बड़ा सुख था।

एक दिन एकाएक आकाश में उड़ता हुआ खून से लथपथ एक बाज साँप की उस गुफा में आ गिरा। उसकी छाती पर कितने ही शख्मों वेफ निशान थे, पंख खून से सने थे और वह अधमरा—सा ज़ोर—ज़ोर से हाँफ रहा था। ज़मीन पर गिरते ही उसने एक दर्द भरी चीख मारी और पंखों को फड़फड़ाता हुआ धरती पर लोटने लगा। डर से साँप अपने कोने में सिकुड़ गया। किंतु दूसरे ही क्षण उसने भाँप लिया कि बाज जीवन की अंतिम साँसें गिन रहा है और उससे डरना बेकार है।

यह सोचकर उसकी हिम्मत बँधी और वह रेंगता हुआ उस घायल पक्षी के पास जा पहुँचा। उसकी तरफ कुछ देर तक देखता रहा, फिर मन ही मन खुश होता हुआ बोला—

“क्यों भाई, इतनी जल्दी मरने की तैयारी कर ली?

शरीर में ताकत रही, कोई सुख ऐसा नहीं बचा जिसे न भोगा हो। दूर-दूर तक उड़ानें भरी हैं, आकाश की असीम उँचाइयों को अपने पंखों से नाप आया हूँ। तुम्हारा बड़ा दुर्भाग्य है कि तुम ज़िंदगी भर आकाश में उड़ने का आनंद कभी नहीं उठा पाओगे।

साँप बोला— आकाश! आकाश को लेकर क्या मैं चाटूँगा! आकाश में आखिर रखा क्या है? क्या मैं तुम्हारे आकाश में रेंग सकता हूँ! ना भाई, तुम्हारा आकाश तुम्हें ही मुबारक, मेरे लिए तो यह गुफा भली। इतनी आरामदेह और सुरक्षित जगह और कहाँ होगी?

साँप मन ही मन बाज की मूर्खता पर हँस रहा था। वह सोचने लगा कि आखिर उड़ने और रेंगने के बीच कौन-सा भारी अंतर है। अंत में तो सबके भाग्य में मरना ही लिखा है शरीर मिट्टी का है, मिट्टी में ही मिल जाएगा।



अचानक बाज ने अपना झुका हुआ सिर उपर उठाया और उसकी दृष्टि साँप की गुफा के चारों ओर घूमने लगी। चटानों में पड़ी दरारों से पानी गुफा में टपक रहा था। सीलन और अँमोरे में डूबी गुफा में एक भयानक दुर्गंध फैली हुई थी, मानो कोई चीज़ वर्षों से पड़ी-पड़ी सड़ गई हो।

बाज के मुँह से एक बड़ी शोर की करुण चीख फूट पड़ी आह! काश, मैं सिर्फ एक बार आकाश में उड़ पाता।

बाज की ऐसी करुण चीख सुनकर साँप कुछ सितपिटा-सा गया। एक क्षण के लिए उसके मन में उस आकाश के प्रति इच्छा पैदा हो गई जिसके वियोग में बाज तना व्याकुल होकर छटपटा रहा था। उसने बाज से कहा यदि तुम्हें स्वतंत्रता इतनी प्यारी है तो इस चान के किनारे से पर क्यों नहीं उड़ जाने की कोशिश करते। हो सकता है कि तुम्हारे पैरों में अभी इतनी ताकत बाकी हो कि तुम आकाश में उड़ सको। कोशिश करने में क्या हर्ज है?

बाज में एक नयी आशा जग उठी। वह दूने उत्साह से अपने घायल शरीर को घसीटता हुआ चटान के किनारे तक खींच लाया। खुले आकाश को देखकर उसकी आँखें चमक उठीं। उसने एक गहरी, लंबी साँस ली और अपने पंख फैलाकर हवा में कूद पड़ा।



किन्तु उसके टूटे पंखों में इतनी शक्ति नहीं थी कि उसके शरीर का बोझ सँभाल सके। पत्थर—सा उसका शरीर लुढ़कता हुआ नदी में जा गिरा। एक लहर ने उठकर उसके पंखों पर जमे खून को धो दिया, उसके थके माँदे शरीर को सफेद पन से ढक दिया, फिर अपनी गोद में समेटकर उसे अपने साथ सागर की ओर ले चली।

लहरें चटानों पर सिर घुनने लगीं मानो बाज की मृत्यु पर आँसू बहा रही हों। घीरे—घीरे समुद्र के असीम विस्तार में बाज आँखों से ओझल हो गया। चान की खोखल में बैठा हुआ साँप बड़ी देर तक बाज की मृत्यु और आकाश के लिए उसके प्रेम के विषय में सोचता रहा।

आकाश की असीम शून्यता में क्या ऐसा आकर्षण छिपा है जिसके लिए बाज ने अपने प्राण गँवा दिए? वह खुद तो मर गया लेकिन मेरे दिल का चैन अपने साथ ले गया। न जाने आकाश में क्या खजाना रखा है? एक बार तो मैं भी वहाँ जाकर उसके रहस्य का पता लगाऊँगा चाहे कुछ देर के लिए ही हो। कम से कम उस आकाश का स्वाद तो चख लूँगा।

यह कहकर साँप ने अपने शरीर को सिकोड़ा और आगे रेंगकर अपने को आकाश की शून्यता में छोड़ दिया। धूप में क्षण भर के लिए साँप का शरीर बिजली की लकीर—सा चमक गया।

किंतु जिसने जीवन भर रेंगना सीखा था, वह भला क्या उड़ पाता? नीचे छोटी—छोटी चटानों पर धप्प से साँप जा गिरा। ईश्वर की कृपा से बेचारा बच गया, नहीं तो मरने में क्या कसर बाकी रही थी। साँप हँसते हुए कहने लगा— सो उड़ने का यही आनंद है भर पाया मैं तो! पक्षी भी कितने मूर्ख हैं। मारती के सुख से अनजान रहकर आकाश की उँचाइयों को नापना चाहते थे। किंतु अब मैंने जान लिया कि आकाश में कुछ नहीं रखा। केवल ढेर—सी रोशनी के सिवा वहाँ कुछ भी नहीं, शरीर को सँभालने के लिए कोई स्थान नहीं, कोई सहारा नहीं। फिर वे पक्षी किस बूते पर इतनी डींगें हाँकते हैं, किसलिए धरती के प्राणियों को इतना छोटा समझते हैं। अब मैं कभी धोखा नहीं खाऊँगा, मैंने आकाश देख लिया और खूब देख लिया। बाज तो बड़ी—बड़ी बातें बनाता था, आकाश के गुण गाते थकता नहीं था। उसी की बातों में आकर मैं आकाश में कूदा था। ईश्वर भला करे, मरते—मरते बच गया। अब तो मेरी यह बात और भी पक्की हो गई है कि अपनी खोखल से बड़ा सुख और कहीं नहीं है। धरती पर रेंग लेता हूँ, मेरे लिए यह बहुत कुछ है। मुझे आकाश की स्वच्छंदता से क्या लेना—देना? न वहाँ छत है, न दीवारें हैं, न रेंगने के लिए ज़मीन है। मेरा तो सिर चकराने लगता है। दिल काँप—काँप जाता है। अपने प्राणों को खतरे में डालना कहाँ की चतुराई है?

साँप सोचने लगा कि बाज अभागा था जिसने आकाश की आज़ादी को प्राप्त करने में अपने प्राणों की बाज़ी लगा दी।



किन्तु कुछ देर बाद साँप के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उसने सुना, चटानों के नीचे से एक धधुर, रहस्यमय गीत की आवाश उठ रही है। पहले उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। किन्तु कुछ देर बाद गीत के स्वर अधिक साफ़ सुनाई देने लगे। वह अपनी गुफ़ा से बाहर आया और चट्टान से नीचे झटकने लगा।

सूरज की सुनहरी किरणों में समुद्र का नीला जल झिलमिला रहा था। चटानों को भगोती हुई समुद्र की लहरों में गीत के स्वर फूट रहे थे। लहरों का यह गीत दूर-दूर तक गूँज रहा था।

साँप ने सुना, लहरें मधुर स्वर में गा रही हैं।

हमारा यह गीत उन साहसी लोगों के लिए है जो अपने प्राणों को हथेली पर रखे हुए घूमते हैं।

चतुर वही है जो प्राणों की बाशी लगाकर ज़िंदगी के हर खतरे का बहादुरी से सामना करे।

ओ निडर बाज! शत्रुओं से लड़ते हुए तुमने अपना कीमती रक्त बहाया है। पर वह समय दूर नहीं है, जब तुम्हारे खून की एक-एक बूँद ज़िंदगी के अँधेरे में प्रकाश फैलाएगी और साहसी, बहादुर दिलों में स्वतंत्रता और प्रकाश के लिए प्रेम पैदा करेगी।

तुमने अपना जीवन बलिदान कर दिया किन्तु फिर भी तुम अमर हो। जब कभी साहस और वीरता के गीत गाए जाएँगे, तुम्हारा नाम बड़े गर्व और श्रण से लिया जाएगा।

हमारा गीत ज़िंदगी के उन दीवानों के लिए है जो मर कर भी मृत्यु से नहीं डरते।

—निर्मल वर्मा

शीर्षक और नायक

प्रश्न-अभ्यास



लेखक ने इस कहानी का शीर्षक कहानी के दो पात्रों के आधार पर रखा है। लेखक ने बाज और साँप को ही क्यों चुना? आपस में चर्चा कीजिए।

कहानी से



1. घायल होने के बाद भी बाज ने यह क्यों कहा, मुझे कोई शिकायत नहीं है। विचार प्रकट कीजिए।

2. बाज ज़िंदगी भर आकाश में ही उड़ता रहा फिर घायल होने के बाद भी वह

उड़ना क्यों चाहता था?

3. साँप उड़ने की इच्छा को मूर्खतापूर्ण मानता था। फिर उसने उड़ने की कोशिश क्यों की?
4. बाज के लिए लहरों ने गीत क्यों गाया था?
5. घायल बाज को देखकर साँप खुश क्यों हुआ होगा?



कहानी से आगे

1. कहानी में से वे पंक्तियाँ! चुनकर लिखिए जिनसे स्वतंत्रता की प्रेरणा मिलती हो।
2. लहरों का गीत सुनने के बाद साँप ने क्या सोचा होगा? क्या उसने फिर से उड़ने की कोशिश की होगी? अपनी कल्पना से आगे की कहानी पूरी कीजिए।
3. क्या पक्षियों को उड़ते समय सचमुच आनंद का अनुभव होता होगा या स्वाभाविक कार्य में आनंद का अनुभव होता ही नहीं? विचार प्रकट कीजिए।
4. मानव ने भी हमेशा पक्षियों की तरह उड़ने की इच्छा की है। आज मनुष्य उड़ने की इच्छा किन सामानों से पूरी करता है।



अनुमान और कल्पना

यदि इस कहानी के पात्रा बाज और साँप न होकर कोई और होते तब कहानी कैसी होती? अपनी कल्पना से लिखिए।



भाषा की बात

1. कहानी में से अपनी पसंद के पाँच मुहावरे चुनकर उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए।
2. 'आरामदेह' शब्द में 'देह' प्रत्यय है। यहाँ 'देह' 'देनेवाला' के अर्थ में प्रयुक्त है। देनेवाला के अर्थ में 'द', 'प्रद', 'दाता', 'दाई' आदि का प्रयोग भी होता है, जैसे — सुखद, सुखदाता, सुखदाई, सुखप्रद। उपर्युक्त समानार्थी प्रत्ययों को लेकर दो-दो शब्द बनाइए।

शब्दार्थ

शिखर	—	पहाड़ की चोटी
सरिता	—	नदी
सिटपिटाना	—	भय या घबड़ाहट से सहम जाना
असीम	—	जिसकी कोई सीमा न हो, अपार
खोखल	—	खोखली जगह, बड़ा छेद





टोपी



एक थी गवरइया ;गौरैयाद्ध
और एक था गवरा ;नर
गौरैयाद्ध। दोनों एक दूजे
के परम संगी। जहाँ जाते,
जब भी जाते, साथ ही
जाते। साथ हँसते, साथ ही
रोते, एक साथ खाते—पीते,
एक साथ सोते। भिनसार
होते ही



खोंते से निकल पड़ते दाना चुगने और झुटपुटा होते ही खोंते में आ घुसते। थकान मिटाते
और सारे दिन के देखे—सुने में हिस्सेदारी बटाते। एक शाम गवरइया बोली, आदमी को
देखते हो? कैसे रंग—बिरंगे कपड़े पहनते हैं! कितना फबता है उन पर कपड़ों खाक फबता
है!

गवरा तपाक से बोला, कपड़ा पहन लेने के बाद तो आदमी और बदसूरत लगने लगता है।
लगता है आज लटजीरा चुग गए हो? गवरइया बोल पड़ी। कपड़े पहन लेने के बाद
आदमी की कुदरती खूबसूरती ढँक जो जाती है।

गवरा बोला, अब तू ही सोच! अभी तो तेरी सुघड़ काया का एक—एक कटाव मेरे सामने है,
रोंवें—रोंवें की रंगत मेरी आँखों में चमक रही है। अब अगर तू मानुस की तरह खुद को
सरापा ढँक ले तो तेरी सारी खूबसूरती ओझल हो जाएगी कि नहीं?

कपड़े केवल अच्छा लगने के लिए नहीं, गवरइया बोली, मौसम की मार से बचने के लिए
भी पहनता है आदमी। तू समझती नहीं। गवरा हँसकर बोला, कपड़े पहन—पहनकर
जाड़ा—गरमी—बरसात सहने की उनकी सकत भी जाती रही है। ...और इस कपड़े में बड़ा
लफड़ा भी है। कपड़ा पहनते ही पहननेवाले की औकात पता चल जाती है ...
आदमी—आदमी की हैसियत में भेद पैदा हो जाता है।

फिर भी आदमी कपड़ा पहनने से बाज नहीं आता। गवरइया बोली। नित नए—नए लिबास
सिलवाता रहता है। यह निरा पांगलपन है। गवरा बोला, आदमी तो लिबास से पफकत
लाज ही नहीं ढँकता, हाथ—पैर जो चलने—फिरने, काम करने के वास्ते हैं, उन्हें भी दस्ताने

और मोजे से ढँक लेता है। सिर पर लटें हैं, उन्हें भी टोपी से ढँक लेता है। अपन तो नंगे ही भले।

उनके सिर पर टोपी कितनी अच्छी लगती है। गवरइया बोली, मेरा भी मन टोपी पहनने का करता है। टोपी तू पाएगी कहाँ से? गवरा बोला, टोपी तो आदमियों का राजा पहनता है। जानती है, एक टोपी के लिए कितनों का टाट उलट जाता है। जरा—सी चूक हुई नहीं कि टोपी उछलते देर नहीं लगती। अपनी टोपी सलामत रहे, इसी फिकर में कितनों को टोपी पहनानी पड़ती है। ...मेरी मान तो तू इस चक्कर में पड़ ही मत।

गवरा था तनिक समझदार, इसलिए शक्की। जबकि गवरइया थी जिपी और धुन की पक्की। ठान लिया सो ठान लिया, उसको ही जीवन का लक्ष्य मान लिया। कहा गया है जहाँ चाह, वहीं राह। मामूल के मुताबिक अगले दिन दोनों घूरे पर चुगने निकले।

चुगते—चुगते उसे रुई
का एक फाहा मिला।

मिल गया... मिल
गया... मिल गया...
गवरइया मारे खुशी
के घूरे पर लोटने
लगी। अरे...

क्या मिल गया, रैं
गवरे ने चिहाकर पूछा।

मिल गया... मिल गया... टोपी का जुगाड़ मिल गया... गवरइया ने गवरे के सामने रुई का पफाहा मार दिया। तेरे जैसा ही एक बावरा और था। गवरा बोला, रास्ता चलते—चलते उसे अचानक एक दिन पड़ा हुआ चाबुक मिल गया। चाबुक था बड़ा उम्दा और लचकदार। किसी घुड़सवार के हाथ से छूटकर गिर गया होगा। चाबुक हाथ लगते ही वह बावरा चीखने लगा चाबुक तो मिल गया, बाकी बचा तीन—घोड़ा—लगाम—जीन'। अब ये तीनों तो रास्ते में पड़े मिलने से रहे। सब काम—धाम छोड़ वह बावरा ताउम्र यह रटता रहा 'बाकी बचा तीन—घोड़ा—लगाम—जीन'। गवरा उसे समझाते हुए बोला, इस रुई के पफाहे से लेकर टोपी तक का सफर... तुझे कुछ अता—पता है?

बस देखते जाओ... अब कैसे बनती है टोपी। गवरइया रुई का फाहा लिए एक धुनिया के पास चली गई और बड़े मनुहार से बोली, धुनिया भइया—धुनिया भइया! इस रुई के फाहे को धुन दो। धुनिया बेचारा बूढ़ा था। जाड़े का मौसम था। उसके तन पर वर्षों पुरानी तार—तार हो चुकी एक मिर्जई पड़ी हुई थी। वह काँपते हुए बोला, तू जाती है कि नहीं! देखती नहीं, अभी मुझे राजा जी के लिए रजाई बनानी है।



एक तो यहाँ का राजा ऐसा है जो
चाम का दाम चलाता है। उपर से तू
आ गई फोकट की रुई धुनवाने।
उज्र न करो भइएँ गवरइया
बोली, मैं तुम्हें पूरी उजरत दूँगी।
इसे धुन दो, भइया! आधा तू ले ले,
आधा मैं ले लूँगी।

धुनिए को अपनी ज़िदगी में आज
तक इतनी खरी मजूरी कभी न मिली
थी। सोलह आने में आठ आने मजूरी
तो इसके लिए सपना थी।

वह झट तैयार हो गया।

‘घर्र—चों, घर्र—चों’ उसकी ताँती
बज उठी। उसने बड़े मन से रुई माुनी, प
आधा गवरइया ने।

इससे उत्साहित गवरा—गवरइया एक कोरी के यहाँ गए और कहने लगे, कोरी
भइया—कोरी भइया, इस धुनी रुई से सूत कात दो। कोरी की कमर झुकी हुई थी। उसने
बदन पर धज्जी—धज्जी हो चुका एक मुस्सा डाल रखा था। वह बड़ी अनिच्छा से बोला,
तुम लोग यहाँ से भागते हा कि नहीं। देखते नहीं, अभी मुझे राजा जी के अचकन के लिए
सूत कातने हैं। मुझे फुर्सत नहीं है मुलत में मल्लार गाने की।

भईया, इस मुलुक में सब काम क्या राजा जी के लिए ही होता है?

गवरइया अचरज से बोली।

तू किस मुलुक से आई है?

कोरी ने उसे भर आँख देखा, फजानती नहीं यहाँ

का चलन... खट मरे बरमा, बैठा खाय तुरंग। यहाँ सब काम राजा जी के नाम पर और
राजा जी के लिए होता है। राजा जी के लगुए—भगुए भी तो बहुत हैं... इसी में उनका भी
काम होता है।

मुकरो मत, भइया! हम तुम्हें माकूल मुआवजा देंगे। गवरइया बोल पड़ी, इसे कात दो...
आधा तुम ले लो, आधा मैं ले लूँगी।

कोरी भी तैयार हो गया। इतनी वाजिब मजूरी पर काम न करना मूर्खता होती।

‘तन्न... तन्न’ करके उसकी तकली चरखी ताता—थैया करने लगी। काफी महीन और
लच्छेदार सूत कात दिए उसने।

कदम—कदम पर मिलते कामगारों के सहयोग ने गवरइया को आगे बढ़ने पर उकसा



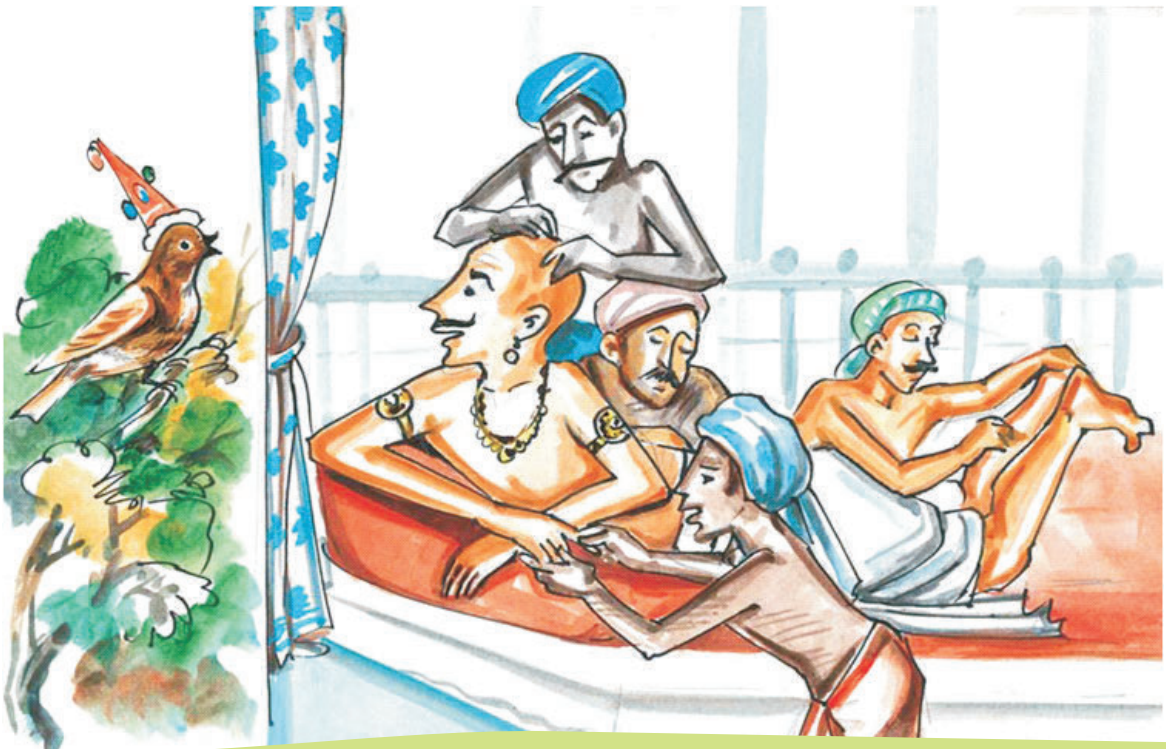
और



दिया। इसके बाद वे दोनों एक बुनकर के पास गए और इसरार करने लगे, बुनकर भइया, बुनकर भइया, इस कते सूत से कपड़ा बुन दो। बुनकर इन्हें अगबग होकर देखने लगा, पहटते हो कि नहीं यहाँ से! देखते नहीं, अभी मुझे राजा जी के लिए बागा बुनना है। अभी थोड़ी देर बाद ही राजा जी के कारिंदे हाजिर हो जाएंगे। साव करे भाव तो चबाव करे चाकर। इतना कहकर बुनकर अपने काम में मशगूल हो गया।

इसे बुन दे भइयाँ गवरइया ने साहस सँजोकर कहा, पहम सेंट—मेंत का काम नहीं करवाते। इसे बुन दे और आधा तू ले ले, आधा हम ले लेंगे। बुनकर ने देखा कि सौदा बुरा नहीं है। वह तैयार हो गया। सूत अपनी ओर खींचकर ताना—बाना पसार दिया। उसका करघा चलने लगा, ढरकी ढुलकने लगी।

थोड़ी ही देर में उसने काफ़ी गफश और दबीज कपड़ा बुन दिया। आधा उसने ले लिया और आधा इन्होंने। गवरइया ने तीन चौथाई मंज़िल मार ली थी। कपड़ा लिए—दिए वह एक दर्जी के पास जा पहुँची, दर्जी भइया—दर्जी भइया, इसकी टोपी सिल दो। खिसकती हो कि नहीं यहाँ से। दर्जी रोष से बोला, देखते नहीं, राजा जी की सातवीं रानी से नौ बेटियों के बाद दसवाँ बेटा पैदा हुआ है। अब उस दस रतन के लिए मुझे ढेरों झब्बे सिलने हैं। दर्जी ने माथे का पसीना पोंछते हुए ठंडी आह भरी, कुछ देना, न लेना.....





भर माथे पसीना। हम तो भइए, बेगार में कुछ करवाते नहीं। गवरइया बोली, इस बुने कपड़े की टोपी सिल दे। बल्कि दो टोपियाँ सिल दे। एक तू ले ले, एक हम ले लेंगे। मुँहमाँगी मजूरी पर कौन मूजी तैयार न होता। 'कच्च-कच्च' उसकी कैंची चल उठी और चूहे की तरह 'सर्र-सर्र' उसकी सूई कपड़े के भीतर-बाहर होने लगी।

बड़े मनोयोग से उसने दो टोपियाँ सिल दीं। खुश होकर दर्जी ने अपनी ओर से एक टोपी पर पाँच पुँफदने भी जड़ दिए। पुँफदनेवाली टोपी पहनकर तो गवरइया जैसे आपे में न रही। डेढ़ टाँगों पर ही लगी नाचने, पुफदक-पुफदककर लगी गवरा को दिखाने, देख मेरी टोपी सबसे निराली... पाँच पुँफदनेवाली।

वाकई तू तो रानी लग रही है। गवरे को भी आखिरकार कहना पड़ा।

फरानी, नहीं, राजा कहो, मेरे राजा! गवरइया उ!फचा उड़ने लगी, फअब कौन राजा मेरा मुकाबला करेगा।

टोपी पहनते ही उसके मन में एक नए हुलस ने शोर मारा कि क्यों न इस मुलुक के राजा का भी एक बार जायजा लिया जाए जिसके लिए इने सारे काम होते हैं। उड़ते-उड़ते वह राजा वेफ महल के वंफगूरे पर जा बैठी।

उसी वक्त राजा अपने चौबारे पर टहलुओं से खुली माँप में पुफलेल की मालिश करवा रहा था। राजा उस वक्त अमानंगा बदन और नंगे सिर था। एक टहलुआ सिर पर चंपी कर रहा था, तो दूसरा हाथ-पाँव की उँगलियाँ पफोड़ रहा था, तो तीसरा पीठ पर मुक्की मार रहा था तो चौथा च्यडली पर गुपी काढ़ रहा था।

गवरइया वंफगूरे पर से ही चिल्लाई, फमेरे सिर पर टोपी, राजा वेफ सिर पर टोपी नहीं... राजा के सिर पर टोपी नहीं। मालिश करवाते राजा की नशर गवरइया से टकरा गई। गवरइया के सिर पर पु!फदनेदार टोपी देखकर उसकी अकल चकरा गई। वह तो लगातार रटे जा रही थी, फमेरे सिर पर टोपी, राजा वेफ सिर पर टोपी नहीं। फअरे कोई मेरी टोपी लाओ... जरा जल्दी। राजा दोनों हाथों से अपना सिर ढँकते हुए चिल्लाया।

टोपी आ गई। राजा ने झट पहन भी ली, देख री फदगुपी। मेरी टोपी में पाँच पुँफदने, गवरइया ने अब दूसरा ही राग अलापना शुरू कर दिया। फराजा की टोपी में एक भी नहीं... मेरी टोपी में पाँच पुफदने, राजा की टोपी में पुँफदने नहीं।

राजा को बेहद हेठी महसूस हुई। इस मुलुक के महाबली राजा के सामने एक चिड़िया की यह मजाल! वह बुरी तरह बिगड़ गया, फइस पफदगुपी की गर्दन मसल दो... पखने नोच लो... सिपाहियों, देर न करो। फखमा करें महाराज! मंत्री ने हाथ जोड़ दिए, फमच्छर मारकर हाथ क्यों गंदा करना! अपने आप चली जाएगी। तब राजा सिपाहियों से बोला, यह ऐसे नहीं मानेगी। इसकी टोपी छीन ले आओ... उसे मैं पैरों से ठोकर मारूँ गा। एक सिपाही ने गुलेल मारकर गवरइया की टोपी नीचे गिरा दी, तो दूसरे सिपाही ने झट वह टोपी लपक ली और राजा के सामने पेश कर दिया। राजा टोपी को पैरों से मसलने ही जा



रहा था कि उसकी खूबसूरती देखकर दंग रह गया। कारीगरी के इस नायाब नमूने को देखकर वह जड़ हो गया मेरे राज में मेरे सिवा इतनी खूबसूरत टोपी दूसरे के पास कैसे पहुँची। सोचते हुए राजा उसे उलट-पुलटकर देखने लगा।

इतनी नगीना टोपी इस मुलुक में बनाई किसने? राजा के मन में खयाल आया। अब तो उस हुनरमंद कारीगर की खोज होने लगी। राजा चाहे और पता न चले!

गिरते-पड़ते दर्जी हाज़िर हुआ, दुहाई अन्नदाता। इतनी बढ़िया टोपी तुमने कभी हमारे लिए क्यों नहीं बनाई? मेघों की गड़गड़ाहट की मानिंद राजा की आवाज़ निकली।

दुहाई अन्नदाता!

हमें दुहाई नहीं... वजह बताओ।

कपड़ा बहुत उम्दा था सरकार! एकदम गपफश और दबीज।

ऐसा उम्दा कपड़ा किसने बुना? नाग की मानिंद राजा फूँक मारने लगा।

गिरते-पड़ते बुनकर हाज़िर हुआ, माफी बख्शें, सरकार।

माफी नहीं... वजह बताओ।

सूत बड़ा उम्दा था सरकार। एकदम महीन और लच्छेदार।

इतना महीन सूत किसने काता? शेर की मानिंद राजा ने दहाड़ मारी।

गिरते-पड़ते कोरी हाज़िर हुआ, जान बख्शें, महाराज!

जान नहीं... वजह बताओ।

रुई बड़ी बेहतरीन थी, सरकार! एकदम बादलों की तरह धुनी हुई। इतनी बेहतरीन रुई किसने धुनी? बिजली की तरह राजा की आवाज़ कड़की।

हाँफते-छाती पीटते मुनिया हाज़िर हुआ, क्षमा अन्नदाता!

क्षमा नहीं... वजह बताओ। राजा गुस्से से काँप रहा था, तुम चारों ने मिलकर इस गवरइया का काम किया... हमारे लिए आज तक ऐसा काम क्यों नहीं किया? आपके लिए भी किया है, सरकार। मुनिए ने जमीन पर लेटकर कहा, आगे भी आपके लिए करेंगे, सरकार? हमारे लिए अब तक जो काम हुआ है, उसमें इतनी नपफासत क्यों नहीं थी? अभय दान दें, तो बोलूँ, मुनिया बोला।

चलो दिया, राजा बोले, अब बताओ...। महाराज! इस गवरइया ने जो भी काम करवाया उसमें आधा हिस्सा दे देती थी। जिसके पास बहुत कुछ है, वह कुछ भी नहीं देता। इसके पास कुछ भी नहीं था फिर भी यह आधा दे देती थी। इसीलिए इसके काम में अपने-आप नपफासत आती गई, सरकार। मुनिया दंडवत पर दंडवत किए जा रहा था।

देख ले-देख ले, राजा! ...आँख में अँगुली डालकर देख ले। इसके लिए पूरे मोल चुकाए हैं। बेगार की नहीं है यह। गवरइया फिर चिल्लाने लगी, यह राजा तो वंफगाल



है। निरा वंफगाल। इसका मान घट गया लगता है। इसे टोपी तक नहीं जुरती... तभी तो इसने मेरी टोपी छीन ली। राजा तो वाकई अकबका गया था। एक तो तमाम कारीगरों ने उसकी मदद की थी। दूसरे, इस टोपी के सामने अपनी टोपी की कमसूरती। तीसरे, खजाने की खुलती पोल। इस पक्षी को कैसे पता चला कि मान घट गया है? तमाम बेगार करवाने, बहुत सख्ती से लगान वसूलने के बावजूद राजा का खजाना खाली ही रहता था। इतना ऐशोआराम, इतनी लशकरी, इतने लवाजिमे का बोझ खजाना

सँभाले भी तो कैसे!

तमाम लोग निकल आए थे... यह अनोखा तमाशा देखने।

मंत्री ने हौले से कहा, यह मुँहफट तो महाराज को बेपरदा ही करके दम लेगी।

राजा तो खुद घबरा रहा था, झट से बोल पड़ा, इसकी टोपी वापस कर दो।

सिपाहियों ने कहना माना। टोपी वापस वंफगूरे की ओर हवा में उछाल दी गई।

गवरइया ने फिर से टोपी पहन ली और उड़-उड़कर कहने लगी, यह राजा तो डरपोक है। निरा डरपोक! मुझसे डर गया। तभी तो इसने मेरी टोपी लौटा दी।

कौन इस मुँहफट के मुँह लगे? क्यों मंत्री जी! कहकर राजा ने अपनी टोपी कसकर पकड़ ली।

प्रश्न—अभ्यास

कहानी से

1. गवरइया और गवरा के बीच किस बात पर बहस हुई और गवरइया को अपनी इच्छा पूरी करने का अवसर कैसे मिला?
2. गवरइया और गवरे की बहस के तर्कों को एकत्र करें और उन्हें संवाद के रूप में लिखें।
3. टोपी बनवाने के लिए गवरइया किस किस के पास गई? टोपी बनने तक के एक-एक कार्य को लिखें।
4. गवरइया की टोपी पर दर्जी ने पाँच पुँफदने क्यों जड़ दिए?

कहानी से आगे

1. किसी कारीगर से बातचीत कीजिए और परिश्रम का उचित मूल्य नहीं मिलने पर उसकी प्रतिक्रिया क्या होगी? ज्ञात कीजिए और लिखिए।
2. गवरइया की इच्छा पूर्ति का क्रम घूरे पर रुई के मिल जाने से प्रारंभ होता है। उसके बाद वह क्रमशः एक-एक कर कई कारीगरों वेफ पास जाती है और उसकी टोपी तैयार होती है। आप भी अपनी कोई इच्छा चुन लीजिए। उसकी पूर्ति के लिए योजना और कार्य-विवरण तैयार कीजिए।
3. गवरइया के स्वभाव से यह प्रमाणित होता है कि कार्य की सपफलता के लिए उत्साह आवश्यक है। सपफलता के लिए उत्साह की आवश्यकता क्यों पड़ती है, तर्क सहित लिखिए।

अनुमान और कल्पना

1. टोपी पहनकर गवरइया राजा को दिखाने क्यों पहुँची जबकि उसकी बहस गवरा से हुई और वह गवरा के मुँह से अपनी बड़ाई सुन चुकी थी। लेकिन राजा से उसकी कोई बहस हुई ही नहीं थी। फिर भी वह राजा को चुनौती देने पहुँची। कारण का अनुमान लगाइए।
2. यदि राजा के राज्य के सभी कारीगर अपने-अपने श्रम का उचित मूल्य प्राप्त कर रहे होते तब गवरइया वेफ साथ उन कारीगरों का व्यवहार कैसा होता?
3. चारों कारीगर राजा के लिए काम कर रहे थे। एक रजाई बना रहा था। दूसरा अचकन के लिए सूत कात रहा था। तीसरा बागा बुन रहा था। चौथा राजा की सातवीं रानी की दसवीं संतान के लिए झब्बे सिल रहा था। उन चारों ने राजा का काम रोककर गवरइया का काम क्यों किया?

भाषा की बात

1. गाँव की बोली में कई शब्दों का उच्चारण अलग होता है। उनकी वर्तनी भी बदल जाती है। जैसे गवरइया गौरैया का ग्रामीण उच्चारण है। उच्चारण के अनुसार इस शब्द की वर्तनी लिखी गई है। पुँफदना, पुफलगेंदा का बदला हुआ रूप है। कहानी में अनेक शब्द हैं जो ग्रामीण उच्चारण में लिखे गए हैं, जैसे—मुलुक—मुल्क, खमा—क्षमा, मजूरी—मजदूरी, मल्लार—मल्हार इत्यादि। आप

क्षेत्रीय या गा!व की बोली में उपयोग होनेवाले कुछ ऐसे शब्दों को खोजिए

2. और उनका मूल रूप लिखिए, जैसे –टेम–टाइम, टेसन/टिसन–स्टेशन। मुहावरों के प्रयोग से भाषा आकर्षक बनती है। मुहावरे वाक्य के अंग होकर प्रयुक्त होते हैं। इनका अक्षरशः अर्थ नहीं बल्कि लाक्षणिक अर्थ लिया जाता है। पाठ में अनेक मुहावरे आए हैं। टोपी को लेकर तीन मुहावरे हैं जैसे –कितनों को टोपी पहनानी पड़ती है। शेष मुहावरों को खोजिए और उनका अर्थ ज्ञात करने का प्रयास कीजिए।

शब्दार्थ

भिनसार	—	प्रातःकाल, सवेरा
खोंते	—	घोंसले
झुटपुटा	—	सबेरे या शाम का समय
		जब प्रकाश इतना कम
		हो कि कोई चीश
		साफ दिखाई न दे, वह
		समय जब कुछ–कुछ
		अँधेरा और कुछ–कुछ
		उजाला हो
लटजीरा	—	चिचड़ा, एक पौध
सरापा	—	सिर से पाँव तक पहना
		जानेवाला वस्त्र
सकत	—	शक्ति, सामर्थ्य
लपफड़ा	—	उलझन, झंझट
पफकत	—	केवल
अपन	—	अपना
फिकर	—	चिंता, फिकर
मत	—	नहीं
मामूल	—	वह बात जो रोज की
		जाए, हमेशा की तरह
घूरा	—	वूफड़े–करकट का ढेर
चिहाकर	—	चौंककर, चकित होकर
जुगाड़	—	उपाय
मनुहार	—	मनाना
चाम	—	त्वचा, चमड़ा





फोकट	—	मूल्यरहित, मुलत
उजरत	—	मजदूरी, मेहनत का बदला, पारिश्रमिक
मल्लार	—	मल्हार, संगीत का एक राग
मुलुक	—	मुल्क, देश
लगुए—भगुए	—	पीछे चलने वाले, मेल—जोल के व्यक्ति
मशगूल	—	व्यस्त
सैंत—मेंत	—	वह काम जिसके का काम लिए कुछ देना न पड़ा हो, बिना लाभ
ढरकी	—	कपड़ा बुनते हुए जुलाहे जिससे बाने का सूत फेंकते हैं
गफश	—	गल्स, घना बुना हुआ
दबीज	—	मोटा, मजबूत
बेगार	—	बिना मजदूरी का काम
मूजी	—	दुष्ट
फुंदने	—	सूत, उफन आदि का फूल या फूलगेंदा
हुलस	—	उल्लास, खुशी
इने—सारे	—	इतने सारे
टहलुआ	—	नौकर
पुफलेल	—	खुशबूदार तेल
पुफदनेदार	—	पुफलगेंदेवाला
पफदगुपी	—	एक छोटी चिड़िया, गौरैया
पखने	—	पंख
खमा	—	क्षमा
नायाब	—	बहुमूल्य, बेशकीमती
हुनरमंद	—	वुफशल, गुणी कारीगर
मानिंद	—	जैसा, अनुरूप, सरीखा
नफासत	—	सज्जा, सजा—सँवरा

टोपी

जुरती	—	जुटना, एकत्र होना, प्राप्त होना
पाखी	—	पक्षी, चिड़िया
लशकरी	—	पलटन, सेना
लवाजिमा	—	यात्रा आदि में साथ रहने वाला सामान
नगीना	—	सुंदर
अकबकाना	—	भौंचक्का होना, घबराना



सूरदास के पद

(1)



(2)

मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी?
किती बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों, है है लाँबी-मोटी।
काढ़त-गुहत न्हावत जैहै, नागिनी सी भुईं लोटी।
काँचौ दूध पियावत पचि-पचि, देति न माखन-रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी।



तेरें लाल मेरौ माखन खायौ।
दुपहर दिवस जानि घर सूनो ढूँढ़ि-ढूँढ़ोरि आपही आयौ।
खोलि किवारि, पैठि मंदिर मैं, दूध-दही सब सखनि खवायौ।
ऊखल चढ़ि, सींके कौ लीन्हौ, अनभावत भुईं मैं ढरकायौ।
दिन प्रति हानि होति गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ।
सूर स्याम कौं हटकि न राखै तैं ही पूत अनोखौ जायौ।

पदों से

प्रश्न-अभ्यास

1. बालक श्रीकृष्ण किस लोभ के कारण दूध पीने के लिए तैयार हुए?
2. श्रीकृष्ण अपनी चोटी के विषय में क्या-क्या सोच रहे थे?
3. दूध की तुलना में श्रीकृष्ण कौन-से खाद्य पदार्थ को अधिक पसंद करते हैं?
4. 'तैं ही पूत अनोखौ जायौ'— पंक्तियों में ग्वालन के मन के कौन-से भाव मुखरित हो रहे हैं?
5. मक्खन चुराते और खाते समय श्रीकृष्ण थोड़ा-सा मक्खन बिखरा क्यों देते हैं?
6. दोनों पदों में से आपको कौन-सा पद अधिक अच्छा लगा और क्यों?



अनुमान और कल्पना

1. दूसरे पद को पढ़कर बताइए कि आपके अनुसार उस समय श्रीकृष्ण की उम्र क्या रही होगी?
2. ऐसा हुआ हो कभी कि माँ के मना करने पर भी घर में उपलब्ध किसी स्वादिष्ट वस्तु को आपने चुपके-चुपके थोड़ा-बहुत खा लिया हो और चोरी पकड़े जाने पर कोई बहाना भी बनाया हो। अपनी आपबीती की तुलना श्रीकृष्ण की बाल लीला से कीजिए।
3. किसी ऐसी घटना के विषय में लिखिए जब किसी ने आपकी शिकायत की हो और फिर आपके किसी अभिभावक (माता-पिता, बड़ा भाई-बहिन इत्यादि) ने आपसे उत्तर माँगा हो।



भाषा की बात

1. श्रीकृष्ण गोपियों का माखन चुरा-चुराकर खाते थे इसलिए उन्हें माखन चुरानेवाला भी कहा गया है। इसके लिए एक शब्द दीजिए।
2. श्रीकृष्ण के लिए पाँच पर्यायवाची शब्द लिखिए।
3. कुछ शब्द परस्पर मिलते-जुलते अर्थवाले होते हैं, उन्हें पर्यायवाची कहते हैं। और कुछ विपरीत अर्थवाले भी। समानार्थी शब्द पर्यायवाची कहे जाते हैं और विपरीतार्थक शब्द विलोम, जैसे—
पर्यायवाची— चंद्रमा—शशि, इंदु, राका
मधुकर—भ्रमर, भौरा, मधुप
सूर्य—रवि, भानु, दिनकर
विपरीतार्थक— दिन—रात
श्वेत—श्याम
शीत—उष्ण

पाठों से दोनों प्रकार के शब्दों को खोजकर लिखिए।

शब्दार्थ

अजहूँ	— आज भी	सूरज	— सूरदास
बल	— बलराम	हरि-हलधर	— कृष्ण-बलराम
बेनी	— चोटी	जोटी	— जोड़ी
है	— होगी	पैठि	— घुसकर
काढ़त	— बाल बनाना	सीके	— छींका जिसमें दूध-दही आदि रखा जाता है
गुहत	— गूँथना	गोरस	— गाय के दूध से बने पदार्थ दही, मक्खन, घी आदि
भुईँ	— पृथ्वी, भूमि	ढोटा	— लड़का
लोटी	— लोटने लगी		
पचि-पचि	— बार-बार		





जम्मू-कश्मीर में हिंदी

भारत के उत्तर में स्थित जम्मू-कश्मीर मूलतः अहिंदीतर प्रदेश है। अहिंदीतर प्रदेश से हमारा अभिप्राय ऐसे क्षेत्र से है, जहाँ हिंदी मातृभाषा के रूप में न बोलकर अन्य भाषा के रूप में प्रयोग में लाई जाती है। जम्मू-कश्मीर राज्य के तीन मुख्य क्षेत्र हैं—जम्मू, कश्मीर तथा लदाख। डोगरी जम्मू क्षेत्र की प्रमुख भाषा है। कश्मीर घाटी में कश्मीरी तथा लदाख में लदाखी प्रमुख रूप से व्यवहार में लाई जाती है। इन भाषाओं के अतिरिक्त राज्य में कई बोलियाँ भी बोली जाती हैं।

जम्मू-कश्मीर में हिंदी बोलने वालों की संख्या पर्याप्त है। यहां शिक्षित जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग हिंदी के व्यावहारिक तथा साहित्यिक रूपों से परिचित है। प्रायः सभी लोग हिंदी समझ-बोल सकते हैं।

जम्मू-कश्मीर राज्य और हिंदी क्षेत्र के बीच प्राचीन काल से ही सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। कश्मीर अपने पर्यटन महत्व के अतिरिक्त विश्व-प्रसिद्ध संस्कृत भाषा का शिक्षा केंद्र रहा है। प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लेने के अतिरिक्त बौद्धिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए भी लोगों का प्रवाह यहाँ आता रहा है। इस्लाम के आगमन से पूर्व बोली जाने वाली कश्मीरी में वैदिक तथा संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव दोनों प्रकार के शब्द पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। आजकल भी ये दोनों प्रकार के शब्द कश्मीरी भाषा में पाए जाते हैं। यहाँ यह कहना असंगत न होगा कि हिंदी में भी संस्कृत के ऐसे शब्दों की बहुत बड़ी संख्या पाई जाती है।

जम्मू-कश्मीर देश-विदेश के तीर्थ-यात्रियों के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है। इनमें से मुख्य आकर्षण अमरनाथ जी की पवित्र गुफा तथा वैष्णों देवी की यात्राएँ हैं। जो यात्री यहाँ आते हैं उनमें हिंदी भाषी क्षेत्रों के यात्री भी होते हैं। आदान-प्रदान की प्रक्रिया में यहां धीरे-धीरे हिंदी जड़े पकड़ती गई। कश्मीर में जैन-उल-आबदीन (बडशाह) के समय में हिंदी भाषा का प्रभाव विशेष रूप से पड़ा होगा। उनका शासन-काल सन् 1420-1470 ई. था। बडशाह के पूर्वज सिकंदर तथा अलीशाह के शासनकाल में जो कश्मीरी पंडित कश्मीर छोड़कर पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में बस गए थे, उनमें से बहुत से लोग बडशाह के समय में पुनः कश्मीर लौटे। तीस-बत्तीस वर्षों के हिंदी प्रदेश के प्रवास में वे ब्रजभाषा और हिंदी की अन्य बोलियों से अवश्य प्रभावित हुए होंगे।

जम्मू-कश्मीर में हिंदी भाषा का प्रचार जहां एक ओर साधुओं, पर्यटकों आदि के द्वारा हुआ, वहीं दूसरी ओर भक्त-कवियों जैसे सूर, तुलसी, मीरा, कबीर आदि के दोहों



तथा पदों ने इसमें योगदान दिया। इन कवियों के कई दोहे व पद सुगम तथा गेय होने के कारण धीरे-धीरे लोकप्रिय हुए तथा हिंदी का संस्कार जड़ पकड़ता गया। आजकल भी ये दोहे तथा पद साधु-संतों तथा सज्जनों की ज़बानी सुने-सुनाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक रुचि में पंजाब, उत्तर प्रदेश जैसे क्षेत्रों के हजारों लोगों को जम्मू-कश्मीर में बसने के लिए प्रेरित किया। इसी प्रकार राज्य के हजारों लोग रोज़ी-रोटी के लिए शीतकाल में राज्य से बाहर काम की खोज में जाते रहे हैं। इन लोगों की वहाँ के लोगों के साथ बोलचाल तथा सहयोग की भाषा हिंदी रही है। इससे स्पष्ट होता है कि जम्मू-कश्मीर के लोगों ने शताब्दियों पूर्व ही हिंदी के संस्कार को समझा और पहचाना था।

संसार की भाषाओं को हम कई परिवारों में बाँटते हैं, जैसे भारोपीय परिवार, कन्नड़ परिवार, चीनी परिवार आदि। जम्मू-कश्मीर में बोली जाने वाली भाषाओं तथा बोलियों का संबंध मुख्य रूप से भारोपीय परिवार की एक शाखा से है। यह शाखा “भारतीय आर्य शाखा” नाम से जानी जाती है।

(लदाख में बोली जाने वाली मुख्य भाषा लदाखी का संबंध भाषाओं के एक अन्य परिवार से है। इसे चीनी परिवार कहते हैं। इसकी एक शाखा तिब्बती-बर्मी है। लदाखी इसी शाखा के अंतर्गत आती है।)

परिवारगत समीपता के कारण हिंदी तथा जम्मू-कश्मीर में बोली जाने वाली भाषाओं में कहीं-कहीं एक-जैसी ध्वनियाँ तथा शब्द देखने को मिलते हैं। कहने का भाव यह है कि जम्मू-कश्मीर के लिए हिंदी कोई पराई भाषा नहीं है।

हिंदी जम्मू-कश्मीर राज्य में कई शताब्दियों से है, यद्यपि सही तिथि बताना कठिन है। मध्यकालीन भक्ति-आंदोलन ने संपूर्ण भारत को प्रभावित किया था। उसका प्रभाव जम्मू-कश्मीर पर पड़ना स्वाभाविक था। इस प्रभाव के फलस्वरूप जम्मू-कश्मीर के कई कवियों ने भक्तिपरक कविताएँ मातृभाषा के अतिरिक्त हिंदी में भी रचीं इस प्रसंग में कश्मीर की संत कवयित्री स्पभवानी का नाम लिया जा सकता है। कश्मीर के एक और भक्तकवि परमानंद ने अपनी कई कश्मीरी रचनाओं में हिन्दी के कुछ अंश जोड़ दिए। उनकी भाषा में ब्रज, खड़ीबोली, पंजाबी तथा कश्मीरी का विचित्र मिश्रण है। यह ‘भाखा’ नाम से जानी जाती है। अठारहवीं शती में लक्ष्मण जू ‘बुलबुल’ ने कुछ कविताएँ लिखीं, जिनमें हिंदी तथा कश्मीरी दोनों भाषाओं का योग है। इधर जम्मू के (दत्तू) नामक कवि ने ब्रजभाषा में कविता की। इनका नाम देवीदत्त भड़वाल था, किंतु ये दत्त (दत्तू) नाम से ही चर्चित हुए। इनका समय अठारहवीं शताब्दी था। ये जम्मू के प्रथम हिंदी कवि माने जाते हैं। ‘वीरविलास’ तथा ‘ब्रजराज पंचाशिका’ इनके द्वारा रचित प्रबंध ग्रंथ हैं। वीरविलास नामक ग्रंथ का आधार संस्कृत भाषा में लिखित ‘महाभारत’ काव्य है। ‘महाभारत’ में एक पर्व विशेष का वर्णन हुआ है, जिसे उत्तर भारत के लोग बड़ी श्रद्धा से गाते हैं। उनके



काव्य की कोई विशेष परंपरा देखने को नहीं मिलती है। विद्वानों का विचार है कि उनके एक वंशज कृष्णलाल नामक किसी व्यक्ति ने 'महाभारत' के कई पदों का अनुवाद हिंदी में किया। कश्मीर के भक्ति-काव्य की तरह जम्मू में भक्ति-काव्य की कोई ठोस परंपरा दिखाई नहीं देती है।

उन्नीसवीं शताब्दी में कश्मीर के लालजी जाडू ने हिंदी से परिपूर्ण महाकाव्य लिखा, जो पर्याप्त साहित्यिक योग्यता का प्रमाण देता है। इसमें कई प्रकार के छंदों का प्रयोग किया गया है, जैसे दोहा, चौपाई, सोरठा आदि। कालांतर में कृष्ण जू राजदान ठाकुर जू मनवटी, हलधर जू ककरू, पंडित नीलकंठ शर्मा जैसे कवियों ने कश्मीरी कविताओं के साथ-साथ बहुत-सी हिंदी कविताएँ भी रचीं, जो भक्ति, धर्म और नीति की भावनाओं से ओतप्रोत हैं। ये कवि आर्थिक लाभ अथवा किसी अन्य लोभ के कारण हिंदी में नहीं लिखते थे। अपितु भक्ति के सहज उद्गारों को वाणी देने के लिए वे हिंदी में रचना करते थे।

महाराजा रणवीर सिंह (सन् 1857-1865 ई.) के समय में हिंदी को सरकारी संरक्षण मिला। 'रणवीर समाचार' पाक्षिक हिंदी समाचार-पत्र निकालने को श्रेय उन्हीं को है। रणवीर सिंह के दरबारी लेखक नीलकंठ ने 'रणवीर प्रकाश' नामक हिंदी पद्य में ग्रंथ लिखा। यह सात सौ पृष्ठों पर आधारित था। इसी काल में 'रणवीर रत्नमाला' एक और ग्रंथ हिंदी में लिखा गया, जिसमें हीरे-जवाहरातों, मोतियों आदि के विषय में वर्णन है। रणवीर सिंह के निधन पर हिंदी में शोकगीत (मरसिया) रचा गया। इसी काल में जम्मू में संस्कृत पाठशाला की स्थापना भी की गई। जहाँ संस्कृत के साथ-साथ हिंदी पढ़ाने की भी व्यवस्था की गई।

महाराजा रणवीर सिंह के उत्तराधिकारी महाराजा प्रताप सिंह ने उर्दू को सरकारी भाषा और फ़ारसी को न्यायालय की भाषा बना दिया। फिर भी हिंदी शिक्षासंस्थानों के पाठ्यक्रम की सूची में एक विषय के रूप में स्वीकार की जाती रही। इससे हिंदी ने राज्य में जड़े जमानी आरंभ कर दीं।

बीसवीं शताब्दी के तीसरे-चौथे दशक तक कश्मीर में भक्तिपूर्ण हिंदी कविता का यह प्रवाह चलता रहा। प्रसिद्ध कश्मीरी रहस्यवादी संत कवि पंडित जिंदा कौल 'मास्टर जी' ने सन् 1941 में 'पत्रपुष्प' नामक पुस्तक में पाँच हिंदी कविताएँ प्रकाशित कराईं। ये रचनाएँ मानव-मूल्यों में कवि के गहरे विश्वास को प्रकट करती हैं। इधर जम्मू में हिंदी लेखन का विधिवत आरंभ बीसवीं शती के दूसरे-तीसरे दशक में हुआ। इस काल में हरदत्त शर्मा नामक एक कवि ने 'भगवद्पदी' ग्रंथ लिखा जिसमें भक्तिरस के गीत हैं। कालांतर में 'डोगरी भजनमाला' नामक एक और पुस्तक प्रकाश में आई, जिसमें डोगरी तथा पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी के भजन तथा गीत सम्मिलित किए गए।

महाराजा हरि सिंह के समय में तत्कालीन शिक्षा निदेशक श्री के.जी. सैयदैन ने सरल उर्दू को फ़ारसी और देवनागरी लिपियों में शिक्षा देने के माध्यम के रूप में घोषित



कर दिया। इससे हिंदी को जम्मू—कश्मीर में फैलने में सहायता मिली।

जम्मू—कश्मीर में हिंदी के प्रचार—प्रसार के लिए एक ई स्वतंत्र संगठनों ने भी काम किया है। स्वतंत्रता से पहले कश्मीर में आर्यसमाज, सनातन धर्म सभा, महावीर दल, श्रीराम त्रिक आश्रम, श्री अलकेश्वरी सभा ट्रस्ट, हिंदी परिषद, हिंदी संस्कृत साहित्य मंडल, हिंदी साहित्य सम्मेलन जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक संगठनों ने हिंदी की विभिन्न परीक्षाओं के लिए छात्रों व छात्राओं को तैयार कराया, हिंदी माध्यम के कई शिक्षा संस्थान खोले और हिंदी की कई पत्रिकाएँ प्रकाशित कीं। इसी समय मास्टर दयाराम नामक एक हिंदी प्रेमी ने जम्मू में एक विद्यापीठ खोला जहाँ हिंदी के छात्रों को विभिन्न परीक्षाओं के लिए तैयार किया जाता था। पीठ ने जम्मू में हिंदी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसी प्रकार 'हिंदी साहित्य मण्डल' नामक एक संस्थान ने जम्मू में हिंदी लेखन तथा इसके प्रचार—प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

“साप्ताहिक महावीर” और “चंद्रोदय” जैसे हिंदी की प्रारंभिक पत्रिकाओं ने कश्मीर में हिंदी के प्रचार—प्रसार की दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया तथा इनके द्वारा कई साहित्यकारों को उभरने का समय मिला। कालांतर में ‘कश्यप’ नामक पत्रिका ने कश्मीर में हिंदी के विकास में बड़ा योगदान दिया तथा हिंदी के कई साहित्यकारों को प्रकाश में लाया। इसी प्रकार भारती, उद्भावना तथा घोषवती जैसी पत्रिकाओं ने जम्मू में हिंदी के विकास तथा विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, आजकल युवा हिंदी लेखक संघ (युहिले) हिंदी के विकास में अपना विशेष योगदान दे रहा है।

स्वतंत्रता—प्राप्ति के बाद राज्य में प्रचार—प्रसार तथा विकास द्रुतगति से होने लगा। भारतीय संविधान के अनुसार हिंदी हमारी राजकीय भाषा है तथा इसे सरकारी संरक्षण प्राप्त है। अपनी लोकप्रियता के कारण यह हमारी राष्ट्रभाषा बन गई है। यह सही है कि जम्मू—कश्मीर की सरकारी भाषा उर्दू है फिर भी स्कूलों के पाठ्यक्रम में हिंदी एक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। राज्य के विद्यालयों में हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था है। महाविद्यालयों में भी हिंदी पढ़ाई जाती है। कई महाविद्यालयों में पत्रिकाएँ निकाली जाती हैं। इसके हिंदी अनुभागों में छात्रों को अपनी रचनाएँ प्रकाशित कराने का अवसर मिलता है। इन पत्रिकाओं में ‘प्रताप’ तथा ‘तवी’ जैसे पत्रिकाएँ उल्लेखनीय हैं। जम्मू—कश्मीर के विश्वविद्यालयों के हिंदी विभागों में प्रति वर्ष सैंकड़ों छात्र प्रवेश लेते हैं। हिंदी में एम. ए. पढ़ाने के अतिरिक्त यहां एम. फिल. तथा पी. एच. डी. करने की भी व्यवस्था है। इन विश्वविद्यालयों में अभी तक सैंकड़ों शोधप्रबंध लिखे जा चुके हैं। जम्मू—कश्मीर में स्थापित केंद्रीय कार्यालयों ने भी यहां हिंदी को लोकप्रिय बनाने में सहायता दी है। इन कार्यालयों में आंशिक रूप से सरकारी काम—काज हिंदी में होता है। राज्य में जो सैनिक भाई देश के विभिन्न क्षेत्रों से आते हैं, वे आमतौर पर हिंदी में बातचीत करते हैं। इससे राज्य में हिंदी का वातावरण बन रहा है। अब लदाख में भी हिंदी का



प्रचार-प्रसार बढ़ रहा है। कई एक लेखक हिंदी साहित्य सृजन में अपना योगदान दे रहे हैं। थुपसन च्वांग की हिंदी कहानियां इस बात का प्रमाण हैं। देश के अन्य क्षेत्रों की तरह यहाँ भी छात्र-छात्राएँ हिंदी में पर्याप्त रुचि ले रहे हैं।

पिछले कुछ वर्षों से जम्मू-कश्मीर में साहित्यकारों का एक बड़ा वर्ग उभरकर सामने आया, जिसने हिंदी में अपनी रचनाएँ लिखीं। इस लेखन के फलस्वरूप राज्य में हिंदी कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, नाटक जैसी विधाएँ उभर कर सामने आई हैं। ये साहित्यकार आधुनिक संवेदना से प्रभावित हैं तथा इनका लेखन-कार्य जारी है।

यहाँ यह कहना असंगत न होगा कि सिनेमा, दूरदर्शन, रेडियों आदि के द्वारा राज्य में हिंदी का प्रचार-प्रसार तेज़ गति से हुआ। हिंदी चलचित्र लोग चाव से देखते हैं। 'शीराज़ा', 'योजना', 'वितस्ता', 'नीलजा', 'हिमानी' जैसी पत्रिकाएँ यहाँ हिंदी लेखन को प्रकाशित कराने में आजकल सक्रिय हैं। 'कश्मीर टाइम्स', 'जम्मू समाचार', 'इवनिंग न्यूज़' आदि हिंदी में समाचार पत्र छपते हैं।

कुल मिलाकर जम्मू-कश्मीर में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है।

—विभागीय

प्रश्न-अभ्यास

बोध और विचार

1. जम्मू-कश्मीर में बोली जाने वाली भाषाओं के नाम लिखें।
2. प्राचीन काल में जम्मू-कश्मीर में हिंदी का प्रचार किनके द्वारा हुआ?
3. हिंदी भाषा का संबंध संसार के कौन-से भाषा-परिवार से है?
4. कश्मीर के भक्त-कवि हिंदी में क्यों कविता करना चाहते थे?
5. जम्मू के प्रथम हिंदी कवि का पूरा नाम क्या था? वे किस नाम से प्रसिद्ध हुए?
6. 'वीरविलास' नामक ग्रंथ के कवि का नाम लिखें।
7. हिंदी को जम्मू-कश्मीर में कब सरकारी संरक्षण मिला?
8. जम्मू-कश्मीर की सरकारी भाषा का नाम लिखें।
9. हिंदी हमारे देश की राष्ट्रभाषा क्यों बन गई?
10. आजकल जम्मू-कश्मीर में हिंदी का प्रचार तथा प्रसार किन माध्यमों से हो रहा है।

भाषा-अध्ययन

'सामाजिक' शब्द का अर्थ है समाज से संबंधित। यह विशेषण है। प्रस्तुत पाठ में से कई और शब्द प्रयुक्त हुए हैं। ऐसे शब्दों को छाँटकर लिखें तथा उनके वाक्य बनाएँ।

योग्यता विस्तार

जम्मू व कश्मीर में बोली जाने वाली विभिन्न उपभाषाओं (बोलियों) के नाम ज्ञात कर उनकी सूची बनाएँ।



सुदामा चरित



सीस पगा न झँगा तन में, प्रभु! जाने को आहि बसे केहि ग्रामा।
धोती फटी-सी लटी दुपटी, अरु पाँय उपानह को नहिं सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक, रह्यो चकिसों बसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल को धाम, बतावत आपनो नाम सुदामा॥

ऐसे बेहाल बिवाइन सों, पग कंटक जाल लगे पुनि जोए।
हाय! महादुख पायो सखा, तुम आए इतै न कितै दिन खोए॥
देखि सुदामा की दीन दसा, करुना करिकै करुनानिधि रोए।
पानी परात को हाथ छुयो नहिं, नैनन के जल सों पग धोए॥

कछु भाभी हमको दियो, सो तुम काहे न देत।
चाँपि पोटरी काँख में, रहे कहो केहि हेतु॥

आगे चना गुरुमातु दए ते, लए तुम चाबि हमें नहिं दीने।
स्याम कह्यो मुसकाय सुदामा सों, “चोरी की बान में हौ जू प्रवीने॥
पोटरि काँख में चाँपि रहे तुम, खोलत नाहिं सुधा रस भीने।
पाछिलि बानि अजौ न तजो तुम, तैसई भाभी के तंदुल कीन्हे॥”

वह पुलकनि, वह उठि मिलनि, वह आदर की बात।
वह पठवनि गोपाल की, कछू न जानी जात॥
घर-घर कर ओड़त फिरे, तनक दही के काज।
कहा भयो जो अब भयो, हरि को राज-समाज।
हैं आवत नहीं हुतौ, वाही पठयो ठेलि॥
अब कहिहौं समुझाय कै, बहु धन धरौ सकेलि॥

वैसोई राज-समाज बने, गज, बाजि घने मन संभ्रम छायो।
कैधों पर्यो कहूँ मारग भूलि, कि फैरि कै मैं अब द्वारका आयो॥
भौन बिलोकिबे को मन लोचत, सोचत ही सब गाँव मझायो।
पूँछत पाँडे फिरे सब सों, पर झोपरी को कहूँ खोज न पायो।

कै वह टूटी-सी छानी हती, कहँ कंचन के अब धाम सुहावत।
कै पग में पनही न हती, कहँ लै गजराजहु ठाढ़े महावत॥
भूमि कठोर पै रात कटै, कहँ कोमल सेज पै नींद न आवत॥
कै जुरतो नहिं कोदो सवाँ, प्रभु के परताप तें दाख न भावत॥

-नरोत्तमदास

प्रश्न-अभ्यास



कविता से

1. सुदामा की दीनदशा देखकर श्रीकृष्ण की क्या मनोदशा हुई? अपने शब्दों में लिखिए।
2. “पानी परात को हाथ छुयो नहिं, नैनन के जल सों पग धोए।” पंक्ति में वर्णित भाव का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. “चोरी की बान में हौ जू प्रवीने।”



- (क) उपर्युक्त पंक्ति कौन, किससे कह रहा है?
- (ख) इस कथन की पृष्ठभूमि स्पष्ट कीजिए।
- (ग) इस उपालंभ (शिकायत) के पीछे कौन-सी पौराणिक कथा है?
4. द्वारका से खाली हाथ लौटते समय सुदामा मार्ग में क्या-क्या सोचते जा रहे थे? वह कृष्ण के व्यवहार से क्यों खीझ रहे थे? सुदामा के मन की दुविधा को अपने शब्दों में प्रकट कीजिए।
5. अपने गाँव लौटकर जब सुदामा अपनी झोंपड़ी नहीं खोज पाए तब उनके मन में क्या-क्या विचार आए? कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
6. निर्धनता के बाद मिलनेवाली संपन्नता का चित्रण कविता की अंतिम पंक्तियों में वर्णित है। उसे अपने शब्दों में लिखिए।



कविता से आगे

1. द्रुपद और द्रोणाचार्य भी सहपाठी थे, इनकी मित्रता और शत्रुता की कथा महाभारत से खोजकर सुदामा के कथानक से तुलना कीजिए।
2. उच्च पद पर पहुँचकर या अधिक समृद्ध होकर व्यक्ति अपने निर्धन माता-पिता-भाई-बंधुओं से नजर फेरने लग जाता है, ऐसे लोगों के लिए सुदामा चरित कैसी चुनौती खड़ी करता है? लिखिए।



अनुमान और कल्पना

1. अनुमान कीजिए यदि आपका कोई अभिन्न मित्र आपसे बहुत वर्षों बाद मिलने आए तो आप को कैसा अनुभव होगा?
2. कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीति।
विपति कसौटी जे कसे तेई साँचे मीत॥
इस दोहे में रहीम ने सच्चे मित्र की पहचान बताई है। इस दोहे से सुदामा चरित की समानता किस प्रकार दिखती है? लिखिए।



भाषा की बात

- “पानी परात को हाथ छुयो नहिं, नैनन के जल सो पग धोए”
ऊपर लिखी गई पंक्ति को ध्यान से पढ़िए। इसमें बात को बहुत अधिक

बढ़ा-चढ़ाकर चित्रित किया गया है। जब किसी बात को इतना बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया जाता है तो वहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार होता है। आप भी कविता में से एक अतिशयोक्ति अलंकार का उदाहरण छाँटिए।



कुछ करने को

1. इस कविता को एकांकी में बदलिए और उसका अभिनय कीजिए।
2. कविता के उचित सस्वर वाचन का अभ्यास कीजिए।
3. 'मित्रता' संबंधी दोहों का संकलन कीजिए।

शब्दार्थ

पगा	— पगड़ी	परात	— थाली की तरह का
झँगा	— ढीला कुरता		पीतल आदि धातु से
आहि	— है		बना एक बड़ा और
लटी	— लटकना		गहरा बरतन
दुपटी	— अंगोछा, गमछा	पाछिली	— पिछला
उपानह	— जूता	पुलकनि	— खुशी, उमंग
द्विज	— ब्राह्मण	पठवनि	— भेजना, विदाई
चकिसों	— चकित, विस्मित	बिलोकिबे	— देखना
वसुधा	— पृथ्वी	मझायो	— बीच में
बिवाइन	— पाँव की एड़ी का	सुहावत	— सुंदर/भला लगना
	फटना	पनही	— जूता
अभिरामा	— सुंदर	महावत	— हाथीवान
जोए	ढूँढ़ना	जुरत	— जुटना, प्राप्त होना



शब्दकोश

इस शब्दकोश से आपको इस पुस्तक के पाठों के कठिन शब्दों के अर्थ समझने में सहायता मिलेगी। नीचे बाईं ओर कठिन शब्द तथा दाईं ओर उसका अर्थ दिया गया है।

कहीं-कहीं शब्दों के अनेक पर्याय भी दिए गए हैं। इससे आप प्रसंग के अनुसार अनुकूल शब्द का चयन करना सीख सकेंगे। यह शब्दकोश आपको शब्दों के न केवल सही अर्थ जानने में मदद करेगा अपितु शब्दों की सही वर्तनी भी सिखाएगा।

शब्द का अर्थ देने से पहले मूल शब्द के बाद कोष्ठक में एक संकेताक्षर दिया गया है। व्याकरण की दृष्टि से कोई शब्द संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि शब्दों में से किस भेद का है, यह सूचना आपको इस संकेताक्षर से मिलेगी। यहाँ जो संकेताक्षर अथवा संक्षिप्त रूप प्रयुक्त हुए हैं, वे इस प्रकार हैं—

अ.	- अव्यय	अ.क्रि.	- अकर्मक क्रिया
क्रि.	- क्रिया	क्रि.वि.	- क्रिया विशेषण
पु.	- पुलिंग	फा.	- फारसी
मु.	- मुहावरा	वि.	- विशेषण
सं.	- संज्ञा	स.क्रि.	- सकर्मक क्रिया
सर्व.	- सर्वनाम	स्त्री.	- स्त्रीलिंग

इस शब्दकोश में अपेक्षित शब्द का अर्थ ढूँढ़ना शुरू करने से पहले यह उचित होगा कि शब्दकोश देखने की सही विधि आप जान लें। इसके लिए नीचे लिखे बिंदुओं को ध्यान में रखना होगा—

1. जिस शब्द के बारे में जानकारी प्राप्त करनी है, उसके प्रारंभ का वर्ण देखा जाता है। उसके आधार पर ही शब्द ढूँढ़ा जाता है।
2. शब्दकोश में शब्दों को इस वर्ण-अनुक्रम में दिया जाता है—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ के पश्चात् क से ह तक के सही वर्ण क्रम के अनुसार।



3. क्ष, त्र, ज्ञ को ह के बाद नहीं ढूँढ़ना चाहिए। क्ष, क् और ष का संयुक्त रूप है। अतः क से शुरू होने वाले शब्दों के समाप्त होने पर क्ष से प्रारंभ होने वाले शब्द देखे जा सकते हैं।
4. त्र, त् और र का संयुक्त रूप है। अतः त्र से शुरू होने वाले शब्द त से शुरू होने वाले शब्दों के बाद ही ढूँढ़े जाने चाहिए। त्य से संबंधित शब्द जब समाप्त हो जाते हैं तब त्र से आरंभ होनेवाले शब्द देखे जा सकते हैं।
5. ज्ञ, ज् और ज का संयुक्त रूप है। अतः ज्ञ से शुरू होने वाले शब्दों को ज से शुरू होने वाले शब्दों के बाद ही ढूँढ़ना चाहिए। ज से संयुक्त होकर बनने वाला पहला वर्ण ज्ञ ही है। अतः जौहरी के बाद ही ज्ञ से बनने वाले शब्द देखे जा सकते हैं। ज्ञ के बाद ज्य से बनने वाले शब्द आते हैं।

शब्दार्थ

अंत्येष्टि	— स्त्री.(सं.) मृतक कर्म, दाह कर्म
अकबकाना	— वि. भौंचक्का होना, घबराना
अजीबो-गरीब	— वि. अनोखा
अपन	— सर्व. अपना
असीम	— वि. जिसकी कोई सीमा न हो, अपार
अहमियत	— वि.(अ.) महत्व
आँकना	— क्रि. अनुमान लगाना
आपा	— पु.(सं.) अहं
आलम	— पु.(अ.) दुनिया, माहौल
आलीशान	— (वि.) शानदार
आवाजाही	— (स्त्री.) आना-जाना
आहि	— अ.क्रि. है
इत्ते-सारे	— वि. इतने सारे
ईजाद	— क्रि. खोज, अन्वेषण

उजरत	— वि.(अ.) मजदूरी, मेहनत का बदला, पारिश्रमिक
उजागर	— वि. प्रकट करना
उपानह	— पु. जूता
एसएमएस	— अ. लघु संदेश सेवा
कर	— पु.(सं.) हाथ
कसर	— स्त्री.(अ.) घाटा पूरा करना, कमी
काढ़त	— अ.क्रि. बाल बनाना
किरदार	— पु. अभिनेता की भूमिका, चरित्र
कुमक	— स्त्री.(फा.) फौजी टुकड़ी
कोर्ट मार्शल	— पु. फौजी अदालत में सजा सुनाने की तरह
खपत	— स्त्री. माल की बिक्री
खमा	— स्त्री. क्षमा
खयाल	— पु.(फा.) विचार
खिताब	— पु.(अ.) उपाधि, सम्मान
खुराफाती	— वि. शरारती
खोंते	— पु. घोंसले
गंतव्य	— वि.(सं.) स्थान जहाँ किसी को जाना हो
गफश	— वि. गप्स, घना बुना हुआ
गात	— पु. शरीर
गारी	— स्त्री. गाली, अपशब्द
गुडविल	— अ. सुनाम, अच्छी छवि
गुहत	— स.क्रि. गूँथना
गोता	— पु.(अ.) पानी में डूबना
गोरस	— पु. दूध, दही मक्खन, घी आदि
घमासान	— पु. घोर, भयानक
घिसीपिटी	— वि. जो बहुत दिनों से चला आ रहा हो, पुरानी
घूरा	— पु. कूड़े-करकट का ढेर



चकिसों	– वि. चकित, विस्मित
चाम	– पु. त्वचा, चमड़ा
चाव	– पु. चाह, तीव्र इच्छा
चारपाई	– स्त्री. खाट, छोटा पलंग
चिहाकर	– स.क्रि. चौंककर, चकित होकर
जायजा	– पु.(अ.) जाँच-परख
जुगाड़	– पु. उपाय
जुरत (जुरअत)	– स्त्री. बहादुरी, साहस
जुरती	– अ.क्रि. जुटना, एकत्र होना, प्राप्त होना
जोए	– पु. ढूँढ़ना, देखना, खोजना
जोटी	– स्त्री. जोड़ी
झँगा	– पु. ढीला कुरता
झुटपुटा	– पु. सबरे या शाम का समय जब प्रकाश इतना कम हो कि कोई चीज़ साफ़ दिखाई न दे, वह समय जब कुछ-कुछ अँधेरा और कुछ-कुछ उजाला हो
टहलुआ	– पु. नौकर
डलिया	– स्त्री. बाँस का बना एक छोटा पात्र
डामलफाँसी	– पु. आजीवन कारावास का दंड, देश निकाला
डिस्क फॉर्म	– रिकॉर्डिंग का एक रूप
ढरकी	– स्त्री. कपड़ा बुनते हुए जुलाहे जिससे बाने का सूत फेंकते हैं, भरनी
ढँढोरि	– स.क्रि. ढूँढ़ना
ढाँणी	– (नारी जाति संज्ञा) अस्थायी निवास, कच्चे मकानों की बस्ती जो गाँव से कुछ दूर बनी हो
ढाँदस	– पु. दिलासा, धीरज
ढोटा	– पु. लड़का

तंद्रालस	— स्त्री.(सं.), वि.(सं.) नींद से अलसाया हुआ
तनख्वाह	— स्त्री.(फा.) वेतन, पगार
तरकारी	— स्त्री. सब्जी
तह	— स्त्री.(फा.) गहराई
ताउम्र	— प्र.(सं.)स्त्री.(अ.) उम्र भर
दड़बे	— पु. मुर्गियों के रहने की जगह
दबीज	— वि. (फा.)मोटा, मजबूत
दबैल	— वि. दब्बू
दस्तावेज़	— स्त्री.(फा.) प्रमाण संबंधी कागजात, प्रमाण पत्र
दहुँ	— पु. दस
दालान	— पु. बरामदा
दुपटी	— स्त्री. अंगोछा, गमछा
दुहेली	— स्त्री. दुख, दुख में पड़ा हुआ, कष्ट साध्य
दिसि	— स्त्री. दिशा
द्विज	— पु.(सं.) ब्राह्मण
धर्मभीरु	— पु.(वि.) जिसे धर्म छूटने का भय हो, अधर्म से डरने वाला
धींगा-मुश्ती	— वि.(स्त्री.) धक्का-मुक्की, लड़ना-भिड़ना, शरारत
धुआँधार	— पु.(वि.) ताबड़तोड़
नगीना	— सं.(पु.) सुंदर
नफासत	— स्त्री. सज्जा, सजा-सँवरा
न्योता	— पु. निमंत्रण
नाजुक	— वि.(फा.) कोमल
नायाब	— वि. बहुमूल्य, बेशकीमती
निद्रित	— वि.(सं.) सोया हुआ
निमित्त	— पु.(सं.) कारण
पखने	— पु. पंख





पगड़ी	— स्त्री. सिर पर लपेटी जाने वाली कपड़े की लंबी पट्टी
पगा	— पु. पगड़ी
पचि-पचि	— पु. बार-बार
पटकथा	— पु. फिल्म के लिए लिखी जाने वाली कहानी
पठवनि	— स.क्रि. भेजना, विदाई
पनही	— स्त्री. जूता
परात	— स्त्री. थाली की शक्ल का पीतल आदि का एक बड़ा और गहरा बरतन
पर्दाफाश	— पु. भेद खोलना, दोष प्रकट करना
पाँख	— पु. पंख, पर
पाखी	— पु. पक्षी, चिड़िया
पाछिली	— वि. पिछला
पात	— पु. पत्ता
पार्श्वगायक	— वि.(सं.), पु.(सं.) पर्दे के पीछे से गाने वाला
पैतृक	— वि.(सं.) पूर्वजों का, पिता से प्राप्त
प्रत्यूष	— पु.(सं.) प्रातःकाल, भोर
प्रयाण	— पु.(सं.) प्रस्थान, मरना
प्रशस्ति पत्र	— स्त्री.(सं.), पु. प्रशंसा पत्र
फकत	— वि.(अ.) केवल
फदगुद्दी	— स्त्री. एक छोटी चिड़िया, गौरैया
फबना	— अ.क्रि. सजना, शोभा देना
फब्ती	— स्त्री. चोट करने वाली या चुभती बात
फरमान	— पु.(फा.) राजाज्ञा
फिकर	— स्त्री. चिंता, फिक्र
फुँदने	— पु. सूत, ऊन आदि का फूल या गुच्छा
फुँदनेदार	— पु. गुच्छेदार

फुलेल	— पु. खुशबूदार तेल
फैंटेसी	— वि. काल्पनिक
फोकट	— वि. मूल्यरहित, मुफ्त
बटालियन	— स्त्री.(सं.) पलटन
बल	— पु.(सं.) बलराम
बाँचना	— स.क्रि. पढ़ना, सस्वर पढ़ना
बियाबान	— पु. जंगल, उजाड़खंड
बिलोकिबे	— स.क्रि. देखना, अवलोकन करना
बिवाइन	— स्त्री. पाँव की चमड़ी का फटना
बेगार	— स्त्री.(फा.) बिना मजदूरी का काम
बेनी	— स्त्री.(सं.) चोटी
बैरी	— पु. दुश्मन
भगोने-डोंगे	— पु. भोजन पकाने के बर्तन
भिनसार	— पु. प्रातःकाल, सवेरा
भुई	— स्त्री.(सं.) पृथ्वी, भूमि
मचिया	— स्त्री. सुतली
मत	— पु. नहीं
मनुहार	— पु. मनाना
मरहम-पट्टी	— पु.(अ.)स्त्री. जख्म का इलाज, घाव पर दवा लगाकर पट्टी बाँधना
मल्लार	— पु.(अ.) मल्हार, संगीत का एक राग
मशगूल	— वि.(अ.) व्यस्त
महावत	— पु. हाथीवान
मातम	— पु.(अ.) शोक मनाना
मानिंद	— वि.(फा.) जैसा, अनुरूप, सरीखा
मामूल	— वि.(अ.) वह बात जो रोज की जाए, हमेशा की तरह



मुँगरी	– सं. गोल, मुठियादार लकड़ी जो ठोकने-पीटने के काम आती है
मुँडेर	– पु.(सं.) छत के आस-पास बनाई जाने वाली दीवार
मुखातिब	– वि.(अ.) देखकर बात करना
मुलुक	– पु. मुल्क, देश
मुस्तैद	– वि. तत्पर, तैयार रहना
मूजी	– वि.(सं.) दुष्ट
म्यान	– पु.(फा.) तलवार रखने का कोष
मोरी	– स्त्री. नाली, गंदे पानी की नाली
यकीन	– पु.(अ.) विश्वास
लगुए-भगुए	– वि. पीछे चलने वाले, मेल-जोल के व्यक्ति
लटजीरा	– पु. चिचड़ा, एक पौधा
लटी	– स्त्री. लटकी हुई, लटकना
लथपथ	– वि. सना हुआ, तर
लफड़ा	– पु. उलझन, झंझट
लवाजिमा	– पु.(अ.) यात्रा आदि में साथ रहने वाला सामान
लशकरी	– पु.(फा.) पलटन, सेना
लस्टम-पश्टम	– अ. अंट-शंट, अव्यवस्थित रूप
लोटी	– क्रि. लोटने लगेगी
वर्णनातीत	– वि. जिसका वर्णन न किया जा सके
वसुधा	– स्त्री. पृथ्वी
वाकई	– क्रि.वि. बिलकुल, सचमुच
विनिमय	– पु.(सं.) अदल-बदल, वस्तुओं की अदल-बदल
वियोग	– पु.(सं.) अभाव
शिखर	– पु. पहाड़ की चोटी
संवाद	– पु.(सं.) फिल्म में की जाने वाली बातचीत
सकत	– स्त्री. शक्ति, सामर्थ्य

सरापा	— अ.(फा.) सिर से पाँव तक पहना जाने वाला वस्त्र
सलाख	— स्त्री. सलाई, धातु की छड़
सवाक् फिल्म	— पु.(सं.) मूक फिल्म के बाद बनी बोलती फिल्म
साँसत	— कठिनाई में पड़ना, बहुत बड़ा कष्ट
सांगोपांग	— वि.(सं.) पूरी तरह, ऊपर से नीचे तक
सिटपिटाना	— अ.क्रि. भय या घबड़ाहट से सहम जाना
सिलसिला	— वि. संबंध, कड़ी
सिवा	— अ.(अ.) सिवाय, अलावा, अतिरिक्त
सींके	— पु. छींका जिसमें दूध-दही आदि रखा जाता है
सुमिरन	— क्रि. ईश्वर के नाम का जप (भक्ति का एक प्रकार), स्मरण
सुहावत	— वि. सुंदर/भला लगना
सूरज	— पु. सूरदास
सेंत-मेंत का काम	— स्त्री.(अ.) वह काम जिसके लिए कुछ देना न पड़ा हो, बिना लाभ का काम
सौरभ	— पु. सुगंध, सुवास
स्वच्छंद	— पु. अपनी इच्छा के अनुसार चलने वाला
हटकि	— स्त्री. मनाही
हरकारा	— पु. दूत, डाकिया, संदेश पहुँचाने वाला
हरि-हलधर	— पु.(सं.) कृष्ण-बलराम
हस्ती	— वि.(सं.) अस्तित्व
हवाला	— पु.(सं.) उल्लेख करना, उद्धरण
हुलस	— अ.क्रि. उल्लास
हुनरमंद	— पु.(फा.) वि.कुशल, गुणी कारीगर
हैसियत	— स्त्री.(सं.) दरजा
हौले से	— अ. धीरे से

